आर्यों के नित्य-कर्म

मूल्य तीन आना

* ओ३म् *

आर्य्यों के नित्यकर्म्म

ऋषि दयानन्द लिखते हैं "आर्य्य नाम विद्वान्, धार्म्मिक और आप्त पुरुषों का है" और इस लिये उन के नित्य कर्म भी ऐसे ही होने चाहिएँ जो विद्वान् धार्मिक तथा आप्त पुरुषों के योग्य हों। प्रातःकाल के कामों का आरम्भ जागने के साथ ही होता है, इस लिए सब से पहिले जागने का समय निश्चय करने की आवश्यकता है। मनु भगवान का उपदेश है:—

ब्राह्मे मुहूर्त्ते बुध्येत धर्मार्थौचानुचिन्तयेत्।
काय क्लेशांश्च तन्मूलान् वेदतत्वार्थमेवच ॥

"ब्राह्म मुहूर्त अर्थात् चार घड़ी रात रहते

ही उठे, धर्म और अर्थ का चिन्तन करें, शारीरिक रोगों का निदान और (वेदतत्त्वार्थ) परमात्मा का भी ध्यान करे।"

चार घड़ी के तड़के उठने का विचार

नियत किया गया है। सारे संसार के विद्वानों का अनुभव यह है कि बहुत सवेरे उठने से बुद्धि स्वच्छता से काम करना आरम्भ करती है। यह तो परीक्षा सिद्ध बात है कि सब ऋतुओं में सूर्योदय से प्रथम ही उठना मनुष्य को आलसी बनने से रोकता है। गृहस्थ को ज्येष्ठश्रमी मनु महाराज ने लिखा है। यह आश्रम सत्य शास्त्रों में सार संसार का बोझ उठाने वाला बतलाया गया है, किन्तु इस समय शोक के साथ देखा जाता है कि यह आश्रम उलटा संसार के बोझ को बढ़ा रहा है। इस

का कारण केवल यही है कि गृहस्थों ने उन नियमों को सर्वथा त्याग दिया जो वेद ने उन के लिये नियत किए थे। उन नियमों में सब से पहिले प्रातःकाल का जागना है, और प्रातःकाल जागने के लिए आवश्यक है कि सोने का समय भी नियत हो।

विद्वानों की सम्मति है कि स्वस्थ (तन्दुरुस्त जवान) आदमी के लिए ६ से ७ घंटों तक सोना आवश्यक है। गर्मियों में प्रातःकाल ४ बजे उठना आवश्यक है, जाड़ों में ५ बजे उठने से भी वही कार्य्य सिद्ध हो सकता है क्यों कि रातें बड़ी होती हैं। लड़कों तथा लड़कियों के लिये ८ घंटों तक सोना आवश्यक है। तब प्रत्येक आर्य गृह का नियम यह होना चाहिये कि गृहपति ५ वर्ष से ऊपर १२ वर्ष तक की

अवस्था वाले बच्चों को नौ बजे अवश्य सुला देवे और उन को ५ बजे से पहिले न जगावे और स्वयम् अपने पति तथा अन्य बड़े स्त्री पुरुषों सहित गर्मियों में ६ व ६॥ बजे अवश्य सो जावे। जाड़ों में १० वा १०॥ बजे सो कर ५ बजे उठना ठीक है। जो ६ घंटे की नींद में गुज़ारा कर सकें वह उठने का समय कुछ पहिले नियत करलें किन्तु सोने का समय पीछे न लेजावें क्योंकि आधी रात से पहिले के दो घंटों का आराम पिछली रात के चार घंटों के बराबर है। इस पर बहुत से भाई बहाना कर सकते हैं कि उन को जल्द नींद नहीं आती वा प्रातः उठने में आलस्य रहता है, किन्तु यह सब अभ्यास से दूर हो जाता है। सब इन्द्रियों पर मन राजा है, यह सर्व तन्त्र सिद्धान्त है।

मानसिक शक्ति का प्रयोग करो। मन में दृढ़ संकल्प कर के सो जाओ कि अमुक (फ़लाने) समय में उठेंगे, आश्चर्य से देखोगे कि उसी समय नींद खुल जायेगी। यह बात प्रत्येक आर्य्य को याद रखनी चाहिये कि सारी बुराइयों का समय १० बजे से लेकर ३ बजे तक है। चोर और बटमार, कामी और जुए-बाज़ इसी समय निःशङ्क घूमते और सरल शुद्धात्माओं को भी गिराने का साहस करते हैं इस लिये यह समय संयमी पुरुष ध्यान में व्यतीत करता है, और गृहस्थ को अपनी इन्द्रियों के आराम देने में व्यतीत करना चाहिये।

कार्य क्रम का समय विभाग

आर्य्य पुरुषों को केवल सोने और जागने का ही विशेष नियम नहीं बनाना चाहिये

प्रत्युत दिन रात के सारे कामों के लिए एक ही प्रकार का नियम बनाना चाहिये। स्नान, संध्या भोजनादि सब के लिये आर्य्यों का एक सा ही नियम होना चाहिये। इस के न होने से इस समय बड़ा ही विघ्न पड़ रह है।

यदि आर्य्य समाजस्थ मात्र अपने सर्व कामों के लिए एकसा ही समय नियत कर लें तो काम करने में बड़ा सुबीता होगा। फिर न अतिथि सत्कार में कष्ट होगा और न अतिथियों को ही दुःख मिलेगा।

अंग्रेज़ों ने दो बजे अपना टिफ़िन (जल-पान) का समय नियत कर रक्खा है। जिस समय दो पर चोट लगी जज फ़ैसला लिखना बन्द कर देगा, बैरिस्टर अपनी वक्तृता को बीच में ही छोड़ देगा, सौदागर सौदा देने को अटका लेगा और टिफ़िन पर बैठेगा यहां

तक कि चलती हुई रेल में भी यह लोग अपनी Lunch basket (भोजन की टोकरी) खोल कर बैठ जायँगे। किन्तु यहां कोई नियम ही नहीं। कोई दिन में दो बार खाता है, कोई तीन, कोई चार, कोई पांच बार दांतों को कष्ट देता है और कोई दिन भर ही खाता रहता है। और इस में भी कोई नियम नहीं। आज मैंने दो बार भोजन किया तो कल चार बार और परसों तीन बार करूँगा, और आये गये के पास बीमारियों की शिकायत बराबर करता चला जाऊँगा। प्रत्येक बुद्धिमान अपने तथा अपने पड़ोसियों के जीवन से बहुत से दृष्टान्त एकत्र कर सकता है।

सोने जागने का प्रकार।

सोने और जागने के सम्बन्ध में एक बात याद रखनी चाहिये। खटिया पर लेटने के

पश्चात् यदि तत्काल ही नींद न आवे तो याद करो कि तुमने सोने से प्रथम हाथ पैर धो लिए या नहीं, यदि न धोये हों तो हाथ पैर और मुंह धो कर अंगोछ डालो। यदि उस पर भी नींद न आवे तो ५ मिनट टहल कर लेट जाओ, फिर नींद आ जायगी। यदि शरीर की अवस्था ऐसी हो गई हो कि इस पर भी नींद न आवे तो सीधे लेट कर लम्बे श्वास प्रश्वास आने जाने दो और चारों ओर से हटा कर ध्यान "ओ३म्" पर लगा दो उसी समय नींद आ जायगी। नींद ठीक नहीं आ सकती यदि सोने से पहिले सायंकाल की व्यालू (भोजन) को पचने के लिये कम से कम २॥ घंटे न दिये जाएँ। इस लिये सर्व आर्य सामाजिक गृहों में सायंकाल के भोजन का समय ७ बजे से आठ बजे तक होना

चाहिये इस नियम के पालने से गृह सम्बन्धी सर्व नर-नारी रोग रहित रहेंगे। सोने के इस नियम के साथ ही जागने का नियम यह होना चाहिये कि प्रातः काल जब नींद खुले उसी समय उठ कर बैठ जाओ। प्रातः जागते हुए खटिया पर लेटे रहने से बुरे प्रकार के स्वप्न आते हैं तथा मन में बड़ा विक्षेप होता है। शरीर का मन के साथ बड़ा घनिष्ट (गहरा) सम्बन्ध है, यदि शरीर सावधान न हो तो मन भी गिरा रहता है। अतएव नींद खुलते ही (चाहे समय से आध घंटा पहिले क्यों न खुले) चारपाई पर उठ बैठो और मनु महाराज के लेखानुसारः—

पहिले धर्म का चिन्तन करो।

धर्म, अर्थ काम तथा मोक्ष मनुष्य जन्म के साधनों के चार फल बतलाये गये हैं। मनु

जी महाराज ने ऊपर लिखे श्लोक में काम का वर्णन नहीं किया, कारण यह कि काम तो मनुष्य में स्वभाव सिद्ध ही है। जो लोग कामनाओं की उत्पत्ति को ही बन्द करना चाहते हैं वह मनुष्य की बनावट से ही अनभिज्ञ हैं। मनु जी लिखते हैं:—

अकामस्य क्रिया काचिद् दृश्यते नेह कर्हिचित् ।
यद्यद्धि कुरुते किञ्चित् तत्तत्कामस्यचेष्टितम् ।२।४।

"बिना कामना के कोई भी क्रिया दिखाई नहीं देती, जो जो कुछ भी (मनुष्य) करता है वह चेष्टा कामना के बिना नहीं है।" जब मनुष्य कामनाओं का ही पुञ्ज है तो कामना करने के उपदेश की कुछ आवश्यकता नहीं। आवश्यकता यह है कि उस कामना को वश में कर के सीधे मार्ग पर चलाया जावे।

मनु जी इस लिये कहते हैं:—

कामात्मता न प्रशस्ता नचैवहास्त्यकामता ।
काम्योहि वेदाधिगमः कर्मयोगश्च वैदिकः ।२।२८॥

अत्यन्त कामातुरता से बचना और अत्यन्त निष्कामता की मौत से अपनी रक्षा करना मनुष्य का धर्म है, क्योंकि बिना कामना किये न तो वेद का ज्ञान होगा न तदनुकूल आचरण ही हो सकेंगे। इस लिए कामना करने का उपदेश देने की आवश्यकता न थी। हां आवश्यकता थी तो यह जतलाने की कि केवल कामना के ही दास न बन जाओ। बस, मनु महाराज ने शिक्षा दी कि प्रातः उठते ही स्वाभाविक कामात्मता को रोक कर पहिले धर्म अर्थात् अपने कर्त्तव्य का विचार करो, उस धर्म्म के अनुकूल जो अर्थ हों अर्थात् उन सांसारिक वस्तुओं की उपलब्धि पर विचार करो जो धर्म्म विरुद्ध न हों तथा

जिन की प्राप्ति के साधन भी धर्मानुकूल हों। इस के साथ ही शरीर सम्बन्धी रोग यदि हों तो उन के कारण को जान कर उन के बुरे परिणाम से बचने का ढंग सोचो। इस धर्म, अर्थ, तथा शारीरिक क्लेशों के निदान पर प्रातः विचार के साधन पांच वेद-मन्त्र ऋषि दयानन्द ने संस्कार विधि के गृहाश्रम प्रकरण में दिये हैं उनका मन से पाठ तथा उनके अर्थों पर विचार करने के लिये १५ मिनट बहुत हैं।

यह मन्त्र निम्न हैं—

प्रातरग्निं प्रातरिन्द्रं हवामहे, प्रातर्मित्रावरुणा प्रातरश्विना। प्रातर्भगं पूषणं ब्राह्मणस्पतिं, प्रातस्सोममुत रुद्रं हुवेम ॥ १ ॥

हे स्त्री पुरुषो! जैसे हम विद्वान् उपदेशक लोग प्रभात बेला में स्वप्रकाशस्वरूप परमैश्वर्य के दाता और परमैश्वर्ययुक्त प्राण उदान के

समान प्रिय और सर्वशक्तिमान् सूर्य चन्द्र को जिसने उपन्न किया है उस परमात्मा की स्तुति करते हैं और भजनीय सेवनीय ऐश्वर्ययुक्त पुष्टिकर्त्ता अपने उपासक, वेद और ब्रह्माण्ड के पालन करनेहारे अन्तर्यामी प्रेरक और पापियों को रुलानेहारे और सर्वरोगनाशक जगदीश्वर की स्तुति प्रार्थना करते हैं वैसे प्रातः समय तुम लोग भी किया करो॥ १॥

प्रातर्जितं भगमुग्रं हुवेम, वयं पुत्रमदितेर्यो विधर्ता। आध्रश्चिद्यं मन्यमानस्तुराश्चिद्राजाचिद्यं भगं भक्षीत्याह ॥२॥

पांच घड़ी रात्रि रहे जयशील ऐश्वर्य के दाता तेजस्वी अन्तरिक्ष के सूर्य की उत्पत्ति करने और जो कि सूर्यादि लोकों का विशेष करके धारण करने हारा सब ओर से धारण कर्त्ता जिस किसी का भी जानने

जानने हारा दुष्टों का भी दण्ड दाता और सब का प्रकाशक है। जिस भजनीय-स्वरूप को भी इस प्रकार सेवन करता हूँ और इसी प्रकार भगवान् परमेश्वर सब को उपदेश करता है कि तुम, जो मैं सूर्य आदि जगत का बनाने और धारण करने हारा हूँ उस मेरी उपासना किया और मेरी आज्ञा में चला करो जिस से तुम लोग सब उन्नतिशील रहो इस से हम लोग उस की स्तुति करते हैं ॥२॥

भग प्रणेतर्भग सत्यराधो, भगेमां धियमुदवा ददन्नः। भग प्र णो जनय गोभिरश्वैर्भग प्र नृभिर्नृवन्तः स्याम ॥ ३ ॥

हे भजनीयस्वरूप सब के उत्पादक सत्याचार में प्रेरक ऐश्वर्यप्रद सत्य धन को देने हारे सत्याचरण करने हारों को ऐश्वर्यदाता आप परमेश्वर हमें इस प्रज्ञा को दीजिए

और उस के दान से हमारी रक्षा कीजिए। आप गाय आदि और घोड़े आदि उत्तम पशुओं के योग से राज्य श्री का हमारे लिए प्रगट कीजिए। हे! आप की कृपा से लोग उत्तम मनुष्यों से बहुत वीर मनुष्य वाले अच्छे प्रकार होवें ॥ ३ ॥

उतेदानीं भगवन्तः स्यामोत, प्रपित्व उत मध्ये अह्नाम्। उतोदिता मघवन्त्सूर्यस्य, वयं देवानां सुमतौ स्याम ॥ ४ ॥

हे भगवन्! आपकी कृपा और अपने पुरुषार्थ से हम लोग इस समय अकर्षता, उत्तमता की प्राप्ति में और इन दिनों के मध्य में ऐश्वर्य युक्त और शक्तिवान होवें और हे परमपूजित असंख्य धन देने हारे सूर्यलोक के उदय में पूर्ण विद्वान् धार्मिक आप लोगों की अच्छी उत्तम प्रज्ञा और सुमति में हम लोग प्रवृत्त रहें ॥ ४ ॥

भग एव भगवाँ अस्तु देवास्तेन वयं भगवन्तः स्याम । तं त्वा भग सर्व इज्जोहवीति, स नो भग पुरएता भवेह ॥ ५ ॥

हे सकलैश्वर्य सम्पन्न जगदीश्वर ! जिससे उस आत्मा की सब सज्जन निश्चय करके प्रशंसा करते हैं सो आप हे ऐश्वर्यप्रद ! इस संसार और हमारे गृहाश्रम में अग्रगामी और आगे आगे सत्य कर्मों में बढ़ाने हारे हूजिए और जिससे सम्पूर्ण ऐश्वर्य युक्त और समस्त ऐश्वर्य के दाता होने से आप ही हमारे पूजनीय देव हूजिए उसी हेतु से हम विद्वान लोग सकलैश्वर्य सम्पन्न होके सब संसार के उपकार में तन, मन, धन से प्रवृत्त होवें ॥ ५ ॥

प्रातःकाल का कार्यक्रम ।

इस के पश्चात गृह के सर्व स्त्री पुरुषों को शौच निवृत्ति के लिये १५ मिनट बहुत हैं ।

इस के पश्चात छोटे बच्चों को छोड़कर अपनी धर्मपत्नी तथा अन्य गृहस्थ स्त्री-पुरुषों को साथ ले शुद्ध वायु सेवन के लिये बस्ती से बाहर जावे। आध घंटे में बाहर से लौट कर पुरुष १५ मिनिट से आध घंटे तक विशेष व्यायाम कर तथा स्त्रियां स्नान-संध्या से निवृत्त हो कर छोटे बच्चों को जगावें और उन्हें शौच क्रिया कराके स्नान करावें। पुरुष भी विशेष व्यायाम के पश्चात् १५ मिनट आराम करके स्नान कर और फिर प्रेम-पूर्वक सन्ध्योपासना में आसन जमा लें। इस के पश्चात् सारा परिवार मिल कर (५॥ बजे गर्मियों में और ६॥ बजे जाड़ों में) अग्निहोत्र करें। इस प्रकार गर्मियों में ६ बजे तथा जाड़े में ७ बजे घर के सर्व सभासद् विशेष कामों में प्रवृत्त होने के योग्य हो जायँगे। अर्थात् परमात्मा की उपासना

के लिये, धर्मार्थ पर विचार, शारीरिक रोग का निदान तथा व्यायाम यह सर्व साधनमात्र हैं। और जब तक प्रातः मनुष्य परमात्मा का सत्सङ्ग न करले तब तक उसे और किसी काम का आरम्भ नहीं करना चाहिए। अग्निहोत्र इकट्ठे करने के पश्चात् सर्व गृही जुदे जुदे बैठ कर—

स्वाध्याय

में लग जावें। इस में वृद्ध, बाल, नर, नारी का कोई भेद नहीं। बूढ़े, जवान, बाल, स्त्री, पुरुष सब को ही स्वाध्याय नित्यप्रति करना चाहिए। प्रायः देखा गया है कि पौराणिक कुसंस्कारों के कारण बहुधा मनुष्य वृद्धावस्था को ही धर्म ग्रन्थों के पढ़ने का समय समझते हैं। यह बड़ी भारी भूल है। जब सर्व इन्द्रियां शिथिल हो जावेंगी और जब शरीर भी अपने

सँभाले न सँभलेगा उस समय धर्म धन का सञ्चय भला क्या हो सकेगा। इसीलिये आप्त पुरुषों ने कहा है कि (युवैव धर्मशीलस्यात्) वृद्धावस्था से प्रथम ही मनुष्य को धर्म का अभ्यास करना चाहिए। और धर्म के मर्म को जानने के लिए स्वाध्याय से बढ़ कर अन्य कोई साधन नहीं, इतर पुरुषों की तो गणना ही क्या है, ऐसे शास्त्रवित् आर्य समाजी भी देखे हैं जिन को एक सप्ताह में एक बार भी स्वाध्याय करने का अभ्यास नहीं है। कुछ संस्कृतज्ञ पण्डित समझते हैं कि स्वाध्याय का उपदेश उन के लिये नहीं क्योंकि वह धर्मो-पदेश तथा अध्यापन के काम में लगे हुए हैं। यह उन की बड़ी भारी भूल है। प्रातःकाल का स्वाध्याय क्रियायोग का एक अङ्ग महा-मुनि पतञ्जलि ने बतलाया है, और समाधि

की सिद्धि के लिये उस की अत्यन्तावश्यकता है। यदि कोई आर्य पुरुष अपने आपको पण्डित समझते हैं तो उस पण्डिताई को स्थिर रखने के लिये भी उन्हें स्वाध्याय की आवश्यकता है। जो लोग संस्कृत नहीं जानते उन को ऋषि दयानन्द का वेद भाष्य मंगा कर रखना चाहिये। जो वेद भाष्य को न समझ सकें उन के लिये सत्यार्थ प्रकाश तथा ऋग्वेदादि भाष्य भूमिकादि ग्रन्थ उपयोगी हो सकते हैं। हां बहुत से ऐसे सज्जन भी हैं जो कहलाते तो दृढ़ आर्य्य हैं किन्तु जिन्हों ने अब तक आर्य्य भाषा के अक्षर तक नहीं सीखे उन को चाहिये कि जिस भाषा (उर्दू आदि) को वह जानते हों उसी भाषा की धर्म संबंधी किसी पुस्तक का पाठ कर लिया करें। गृह में जिस स्त्री पुरुष को किसी भाषा का भी

ज्ञान न हो वह दूसरे के पास बैठ कर सुनता जाय। तात्पर्य्य यह कि आर्य गृह में कोई भी स्त्री पुरुष ऐसा न होना चाहिए जो नित्य स्वाध्याय न कर लें। इस से धर्म में तुम्हारी श्रद्धा बढ़ेगी आपत्काल में भी धैर्य्य स्थिर रखने का अभ्यास पड़ेगा।

यदि आलस्य को त्याग कर ठीक प्रकार दिनचर्य्या करने की आदत हो तो ऊपर लिखे सारे काम ७ बजे तक समाप्त हो सकते हैं। इस प्रकार तैयारी करने के पश्चात् गृहस्थ को

अर्थ प्राप्ति के साधनों में लगना

चाहिए। रोज़गार किसी तरह का हो सभी अच्छा है। चोरी, झूठ और दग़ाबाज़ी जिस काम में न करनी पड़े वह काम, चाहे संसार की दृष्टि में कैसा ही अधम क्यों

न समझा जावे आर्य्य ऋषियों ने श्रेष्ठ माना है। मनु भगवान ने लिखा है—

न लोक वृत्तं वर्तेत वृत्ति हेतोः कथंचन।
अजिह्मामशठां शुद्धां जीवेद्ब्राह्मणजीविकाम्॥

"गृहस्थ जीविका (रोज़ी) के लिये भी कभी शास्त्र विरुद्ध लोकाचार का बर्ताव न करे किन्तु जिस में किसी प्रकार की कुटिलता, मूर्खता, मिथ्यापन वा अधर्म न हो उस वेदोक्त कर्म सम्बन्धी जीविका को करे।" फिर लिखा है—

परित्यजेदर्थकामौ यौ स्यातां धर्मवर्जितौ।
धर्मं चाप्यसुखोदर्कं लोकाविक्रुष्टमेवच॥

"दौलत और कामनाएँ अधर्म से सिद्ध होती हों तो भी अधर्म सर्वथा छोड़ देवे और वेदविरुद्ध धर्म्माभास जिस के करने से उत्तर काल में दुःख और संसार की उन्नति का

नाश हो वैसा नाममात्र धर्म और कर्म कभी न किया करे।"

संस्कृत विद्या के लोप हो जाने पर भी धर्म से रोज़ी कमाने के नियम को इस देश में प्रचलित रहना सिद्ध करता है कि मनु महाराज का उपरोक्त उपदेश, किसी समय, सारे भारतवर्ष में माननीय समझा जाता था। एक लोकोक्ति में खेती को सब से उत्तम रोज़गार बतला कर, व्यापार को मध्यम पद देते हुए, चाकरी (नौकरी) को निकृष्ट बतलाया है और वास्तव में खेती का काम है भी सब से उत्तम। सब से पहिले तो इस के अतिरिक्त पूरा उपजाऊ और कोई काम नहीं। नौकर आदमी तो वास्तव में कमाता ही कुछ नहीं। उस का तो कथन ही निरर्थक है किन्तु व्यापार में भी केवल धन का हेर-फेर ही होता है।

इस युक्ति को भी छोड़ कर सर्व कामों में से एक खेती और दूसरी शिल्पाक्रिया (कारीगरी) ही ऐसे काम हैं जिन में झूठ बोलने वा धोखा देने की कम बहकावट होती है। व्यापार में भी यदि मनुष्य का हृदय शुद्ध हो तो सचाई से काम चल सकता है किन्तु नौकरी में तो मनुष्य को नर्क ही भोगना पड़ता है। हां यदि मालिक धर्मात्मा हो तो और बात है। फिर भी नौकरी में दुःख ही दुःख है।

पराधीन सपनेहु सुख नाहीं।

यह सब सच है किन्तु धर्मात्मा पुरुष प्रत्येक (हर एक) काम में अर्थात् नौकरी तक में झूठ छल, कपटादि से बच सकता है और अधर्मी पुरुष खेती से उत्तम काम में भी पाप का भागी बन सकता है। इसलिए आर्य्य पुरुषों को सदैव यह विचार रखना चाहिये कि

अधर्म से कमाया हुआ धन उन के घर में कदापि न घुसने पावे।

सन्तोष दूसरा नियम है, जिसका पालन प्रत्येक आर्य्य का कर्तव्य बतलाया गया है। सन्तोष के अर्थ पुरुषार्थहीन होने के नहीं हैं, प्रत्युत् इस का अर्थ यह है कि यदि धर्म से लाखों की जायदाद आ जावे तो आने दो और अधर्म से कमाये हुए एक पैसे के पास भी मत खड़े हो। आर्य्यों को प्रथम रोज़गार बड़े सोच विचार के पश्चात् ग्रहण करना चाहिये, किन्तु जब एक बार किसी रोज़गार में लग-गये तो उसे धर्म और न्याय के नियमों पर निभाना चाहिये।

आर्य्यों के भोजन का समय तथा सामग्री

नियत होने चाहिये। प्रातः स्वाध्याय से

निवृत्त हो कर सारे परिवार को दुग्ध पान करना चाहिये। सात्विक भोजन का जहाँ तक प्रचार रहेगा वहाँ तक ही आर्य्यों की सन्तानों पर ठीक धार्मिक संस्कार पड़ सकेंगे। जिस को सामर्थ हो गाय अवश्य अपने यहां बाँधे। यदि उस की सेवा के लिये नौकर नहीं रख सकता तो सानी (पंजाबी गुतावा) आदि का काम आप सीखे और उस की सेवा से न केवल गोरक्षा का वास्तविक परोपकार करें प्रत्युत अपने परिवार के लिये शुद्ध, उत्तम दुग्ध भी प्राप्त करें। जो लोग इस विषय में समय के अभाव की शिकायत करते हैं उन्हें याद रखना चाहिये कि अपनी गप्प-शप्प के समय में से यदि आधा भी बचा ले तो यह काम बड़ी सावधानी से हो सकता है। तम्बाकू पीना छोड़ दे तो न केवल समय ही बहुत बच

सकता है बल्कि उनको स्वयम् जो आंखों और कानों के रोग हो रहे हैं उन से भी निवृत्ति होगी और उन की सन्तानें भी कुसंस्कार से मुक्त हो जावेंगी। योरुप तथा अमेरिका के देशों में तो आज कल के विद्वान् डाक्टर मुक्तकण्ठ से कह रहे हैं कि हुक्का पीने वाले पुरुषों को सन्तान उत्पन्न करने का ही अधिकार नहीं है। और यह है भी सच्च। तम्बाकू में ऐसा विष है जिस से बढ़ कर हानिकारक दूसरा विष नहीं है। आर्य्यों के घर में हुक्के की गुड़-गुड़ वैसी ही घृणित प्रतीत होनी चाहिये जैसा कि एक धर्मात्मा पुरुष के स्थान पर वेश्या का नाच। सारांश यह कि यदि गप्प-शप्प और हुक्के बाज़ी तथा अन्यान्य छोटे बड़े व्यसनों से समय बचाया जावे तो एक निर्धन गृहस्थ भी अपने सारे परिवार को ताज़ा दूध

पिलाकर उन्हें धर्ममार्ग में चलने की सहायता दे सकता है यदि दूध न मिल सके तो फल वा अन्य कुछ भोजन करके सब अपने अपने कामों में लगजावें।

दूसरा समय भोजन का दश तथा ग्यारह बजे के बीच में होना चाहिये। जिन्हें आगे पीछे काम हो उनके लिये भोजन जुदा रक्खा जा सकता है किन्तु सर्व आर्य्यगण के लिये यदि एक समय भोजन का हो तो अतिथि सत्कार में भी बाधा नहीं पड़ती। इसका वर्णन आगे प्रकरणानुकूल आवेगा। भोजन तैयार होने पर सब से पहिले गृहपति को चाहिये कि बलिवैश्वदेवविधि करें। प्रत्येक आर्य्यगृह में संस्कार विधि तथा पञ्चमहायज्ञविधि आदि ऋषि दयानन्दकृत ग्रन्थ मौजूद होने चाहिएँ। उन के अनुसार चूल्हे में आहु-

तियां डालने के पश्चात् कुत्ता, कौवा, पतितादि के लिये जुदे-जुदे भाग रक्खे।

अतिथि यज्ञ।

तब भोजन वर्त्तने की तय्यारी हो। यदि कोई अतिथि आया हो तो सब से पहिले उस को भोजन करावे। प्रायः देखा गया है कि आर्य्य मन्दिरों में आर्य्योपदेशक ठहरते हैं तो चपरासी आर्य सभासदों के घरों से उन के लिये भोजन ले आता है। किसी के यहां भोजन समय ६ बजे और किसी के बारह बजे, उपदेशक बेचारे का भोजन-समय का कोई नियम ही नहीं रह सकता, इस लिये स्वास्थ्य बिगड़ जाता है। यह नियम है कि नियत समय पर साधारण भोजन भी गुणकारी सिद्ध होता है। समय का अनियम होने से पुष्टिकारक भोजन भी दुखदाई सिद्ध होता है। श्रद्धा-

पूर्वक घर में लेजाकर अतिथि को भोजन करा ने से गृहस्थ तथा अतिथि दोनों में धर्मभाव की वृद्धि होती है। आर्य्यों के लिये केवल समाज के उपदेशक ही अतिथि नहीं हैं प्रत्युत जितने भद्रपुरुष अनियत समय में आ निकलें वह सभी अतिथि हैं और उनका सत्कार करना आतिथ्य समझा जाना चाहिये। कुछ स्वतन्त्र संन्यासी ऐसे विचरते हैं जिन को धर्म मूर्त्ति कहा जावे तो अत्युक्ति न होगी। उनके आसन पर ही प्रेम पूर्वक भोजन लेजाइये वा भिजवा-इये। किसी धर्म्म को मानने वाला भी सदा-चारी पुरुष किसी कारण अकस्मात आया हुआ हो तो उसको भोजन कराना आर्य्य पुरुषों का कर्तव्य ठहराया गया है। इस विषय में पक्ष-पात को समीप नहीं आने देना चाहिये।

इसाई, मुसलमान, जैनी, बौद्ध किसी मत

का अनुयायी क्यों न हो, सर्व सदाचारी अतिथियों को सत्कारपूर्वक भोजन कराना चाहिये। शतपथ ब्राह्मण में उस यज्ञ का सिर कटा हुआ बतलाया गया है जिस में आतिथ्य न हुआ हो। इस विषय पर कुछ अधिक इस लिये लिखा है कि आतिथ्य धर्म का पालन छोड़ने से ही आर्य्यों को अधिक हानि पहुँची है, प्राचीन काल में यहां के आतिथ्य ने ही इस देश का यश सारे भूमण्डल में फैलाकर इसे आर्य्यावर्त्त नाम का अधिकारी बनाया था। आतिथ्य के पश्चात् अपने पितरों अर्थात् बड़े बूढ़ों वा मान्यस्थानी पुरुष स्त्रियों को भोजन करावे तत्पश्चात् गृहपति तथा पत्नि कुटुम्ब सहित मिलकर भोजन करें। जिस गृह में भृत्य (नौकर) न हो वहां बारी-बारी भोजन परोसने का काम छोटे लिया करें और शेष सब मिलकर भोजन करें।

भोजन विधि

भोजन खूब चबाकर करना चाहिये। एक ग्रास को कम से कम २५ बार और अधिक से अधिक ४० बार चबाकर अन्दर निगलना चाहिये। ऐसा किये बिना भोजन पचता नहीं और नाना प्रकार के रोग उत्पन्न होते हैं। इकट्ठे बैठ कर भोजन करने में एक यह भी लाभ है कि गृहपति बच्चों को ठीक प्रकार भोजन सिखा सकता है। स्त्रियों को पाक विधि भले प्रकार सीखना चाहिये। दाल, रोटी, चावलादि के साथ हर समय शाक भाजी भी अवश्य होनी चाहिये। प्रत्येक ऋतु के लिये जो जो भाजी उपयोगी है वह गृह-पति को मँगानी चाहिये। इसी लिये ऋषि दयानन्द ने स्त्रीशिक्षा में वैद्यक की विषेश आवश्यकता बतलाई है। मर्द वही वैद्यक पढ़े

जिसे विशेषतः चिकित्सा निदान का ही काम करना हो किन्तु स्त्रियों में प्रत्येक को वैद्यक जानने की आवश्यकता है। कारण यह है कि औषध सेवन से स्वास्थ्य बिगड़ता है, और औषध सेवन की आवश्यकता तब होती है जब कि भोजन ठीक न मिले, इसलिये सारे परिवार के स्वास्थ का बिगड़ जाना वा सुध-रना गृहपति की अयोग्यता वा योग्यता पर निर्भर है। प्रातःकाल के भोजन के साथ कुछ ऋतु अनुकूल फल भी अवश्य होने चाहिएँ। भोजन सामग्री के विषय में आर्य्य वैद्यों से सम्मति लेनी चाहिये।

प्रातःकाल के भोजन का नाम दुग्धपान समय रख कर मैं १० वा ११ बजे के भोजन का नाम भोजन समय रखता हूं क्योंकि पुष्ट से पुष्ट पदार्थ इसी समय खाये जा कर पच

सकते हैं। तीसरा भोजन २ बजे होना चाहिये क्योंकि ३ घंटे एक समय का किया हुआ भोजन पचाने के लिये काफ़ी हैं। इस का नाम जलपान कहा जा सकता है। कुछ हल्की पकी हुई वस्तु तथा फल वा दुग्ध इस समय की क्षुधा बुझाने के लिये काफ़ी हो सकते हैं। चौथा समय भोजन का अत्यन्त शीतकाल में ६ से ६॥ तक तथा ग्रीष्म ऋतु में ७ से ७॥ तक होना चाहिये। इस का नाम ब्यालू वा ब्यारी पहिले से ही प्रसिद्ध है। रात्रि को इन्द्रियां आराम चाहती हैं। पेट भरा हुआ हो तो गाढ़ निद्रा नहीं आती, इस लिये सायं-काल को खीरादि हल्का भोजन थोड़ा करना चाहिये। आहार शुद्धि के बिना शरीर शुद्धि कठिन और उन के बिना मन तथा आत्म शुद्धि असम्भव, अतएव गृहपालियों को इस योग्य

बनाना कि वह सारे परिवार की आहार शुद्धि का साधन बन सकें, आर्य्यों का पहिला धर्म्म है।

भोजन के सम्बन्ध में ही एक आवश्यक विषय पर लिख देना उचित समझता हूं। जहां खाने की सर्व वस्तुएँ सात्विक चाहिएँ वहां पीने के लिए भी तामस वस्तुओं का प्रयोग कदापि नहीं करना चाहिये। सब से उत्तम

अमृत पान स्वच्छ जल

है। परमात्मा ने अपनी अपार दया से प्यास बुझाने के लिये जल के प्रवाह चला रक्खे हैं इसलिये बहती हुई नदी का जल यदि मिले तो उसे छान कर पीना चाहिये। यदि ऐसे उत्तम भाग्य न हों और निवास के लिये नदी का किनारा न मिल सके, तो अच्छे मीठे कूप का जल वर्तना चाहिये। देखा गया है

कि सर्व कूपों का जल विकार रहित नहीं होता, इसलिए कूपों के जल को उबालने के पश्चात् पीने के कामों में लाना चाहिये। गङ्गा-तट पर तो मैं आनन्द से गङ्गा जल का ही सेवन करता रहा हूं, किन्तु जालन्धर नगर में जब से निवास किया तब भी उबला हुआ जल पीता रहा हूँ। उबले हुए जल का नाम सुनते ही कुछ पुरुष घबरा उठेंगे और पूछेंगे कि बर्सात तथा गर्मियों में गरम जल से कैसे तृप्ति हो सकेगी। प्रथम तो अभ्यास बिगड़ जाने से लोग गरम जल का नाम सुन कर कांप उठते हैं, नहीं तो गरम जल के प्रयोग से प्यास ही कम लगती है। किन्तु यदि ठण्डा जल ही प्रिय हो तो मेरे अमल की पैरवी कीजिए, आपको कष्ट न होगा। सायंकाल ५ बजे उतना जल उबलने को चूल्हे पर रख दिया जाता है जितना दूसरे

दिन तथा रात्रि में पीने के लिए आवश्यक हो। ठीक उबल जाने पर जब जल अच्छी तरह खौलने लगता है तो उसे पीतल के उसी पात्र में ठण्डा होने के लिए रख देते हैं। रात को आठ बजे छान कर वह जल झज्झरों में डाल गीला उपरना ऊपर लपेट मैदान में रख दिया जाता है। प्रातः जल अतीव स्वादिष्ट तथा ठण्डा हो जावेगा। उसे दिन भर आनन्द से भोगिये।

सब से उत्तम वर्षा का जल है। अपने आंगन (सहन) में चादर तान दो, और नीचे जल पात्र रख दो। जल बीच के कूड़े करकट से साफ होकर जलपात्र में आ गिरेगा यह जल बड़ा ही शुद्ध होता है। जहां जलाभाव के कारण वर्षा का जल सुरक्षित करके बर्ता जाता है वहां मनुष्यों के स्वास्थ अच्छे

रहते हैं। किन्तु इस में परिश्रम का व्यय अधिक समझा जाता है। यद्यपि जितना समय वर्षा के जल एकत्र करने में व्यय किया जाता है वह शारीरिक स्वास्थ्य तथा मन की प्रसन्नता का वर्धक ही होता है, तथापि जो लोग कोमल तन्तु (नाज़ुक मिज़ाज) हैं उनके लिए पानी उबाल कर पीना ही ठीक है।

पानी को अमृत बतलाने का कारण यही है कि जितनी अन्य वस्तुएँ पीने के लिये सर्व साधारण वर्तते हैं यह सब निन्दित हैं। मद्य (शराब) के विषय में तो कुछ लिखने की आवश्यकता ही नहीं क्योंकि मोटी बुद्धि का आदमी भी समझ सकता है कि शराब, चरस गांजादि मादक द्रव्यों का तो आर्य्य समाज के साथ कुछ मेल ही नहीं हो सकता, हाँ कुछ आर्य्य पुरुष पुराने हिन्दु कुसंस्कारों में फंस

कर भङ्ग पीने को पाप नहीं समझते, शायद इसलिये कि भङ्ग में मद्यादि की तरह दुर्गन्धि उत्पन्न नहीं होती। किन्तु यह उनकी भूल है। ऋषि दयानन्द शार्ङ्गधर के निम्नलिखित श्लोकार्द्ध का—

"बुद्धिं लुम्पति यद्द्रव्यं मदकारितदुच्यते"

प्रमाण देकर लिखते हैं—"जो जो बुद्धि का नाश करने वाले पदार्थ हैं। उनका सेवन कभी न करे" इस में क्या सन्देह है कि भङ्ग किसी अंश में मद्य से भी बढ़ कर बुद्धि नाशक द्रव्य है यह सब नशे तो इसलिये भी छूट जाते हैं कि लोक में सभ्य पुरुष इस समय इन सबको घृणित दृष्टि से देखने लग गये हैं।

तम्बाकू की हानियां

किन्तु एक नशा ऐसा है जिसने इस समय पंजाब देश का अधिकतर नाश कर दिया है। वह नशा

तम्बाकू है। डाक्टर बतलाते हैं कि तम्बाकू पीने वाले की आँखें ख़राब हो जाती हैं, कभी कभी ऐसे पुरुष अन्धे भी हो जाते हैं, अधिकतर इस व्यसन में फँसे हुए बहिरे हो जाते हैं। दिल की बीमारी से कोई ही हुक़ई बचता होगा। इससे भी बढ़कर हुक़ई मलिन तथा गन्दा रहता है हाथों और मुखसे कैसा दुर्गन्ध आता है। मनुजी कहते हैं कि प्रातः उठकर धर्म और अर्थ का चिन्तन करे, किन्तु मुझे कैसा शोक होता है जब आर्यसमाजों के वार्षिकोत्सवों में भी प्रातः उठते ही आर्यसमाजस्थ यात्रियों को धर्मार्थ के स्थान में आग तथा तमाखू की सूझती है। जो समय स्नान करके परमात्मा के ध्यान में लगने का है उसको आग की तलाश में चिलम पकड़े हुवे, बिताना क्या आर्यों को शोभा देता है। बड़ा कष्ट होता है

जब आर्य मन्दिरों में ठीक अन्तरङ्ग सभाओं के अधिवेशनों में हुक्का की गुड़-गुड़ सुनाई देती तथा हवन की सुगन्ध के स्थान में दुर्गन्ध फैलती दीखती है। जब आपकी दृष्टि में अपने उपासनालय की इतनी भी प्रतिष्ठा नहीं तो फिर आप के समाज मन्दिर को धर्म मन्दिर समझने में राजपुरुषों को सन्देह हो तो आश्चर्य क्या है? बच्चे अपने बड़ों का ही अनुकरण करते हैं क्या आर्य्य सभ्यों को यह नहीं सूझती कि अपनी हुक्केबाज़ी से वे अपनी सन्तानों के रास्ते में कांटे बखेर रहे हैं। मैंने अपने लड़कपन में बूढ़ों से सुना था, कि जब किसी गृहस्थ के घर लड़की उत्पन्न हो तो उसे अपनी बांकी पगड़ी सीधी कर लेनी चाहिये। इस लोकोक्ति के कर्त्ता पैत्रिक संस्कारों के प्रभाव से अनभिज्ञ थे नहीं तो कहते कि सन्तानोत्पत्ति का

विचार करते ही सर्व व्यसनों को छोड़ देना चाहिये। मैं अपने आर्य्य भाइयों से विनय पूर्वक प्रार्थना करता हूं कि हुक्के के राजरोग से शीघ्र मुक्ति उपलब्ध करने का प्रबन्ध करें, यदि वह अपनी सन्तानों को बुराइयों से बचाना तथा अपने वैदिक समाज का गौरव बढ़ाना चाहते हैं।

आर्य्य भाई शायद डरेंगे कि हुक्का छोड़ने से उनका मेदा कमज़ोर हो जायगा। डाक्टरों से पूछेंगे तो मालूम होगा कि मेदा हुक्का पीने से भाड़े का टट्टू बन जाता है। हुक्का छोड़ना कुछ बहुत कठिन नहीं हैं। जो भोजनादि के पश्चात् कुछ आवश्यकता-सी प्रतीत होती रहती थी। इसकी चिकित्सा यह है कि भोजन के पश्चात् तो पान खाना आरम्भ कर दिया और जिन अन्य समयों में हुक्के

का व्यसन हो उन समयों में फल खाना शुरू करें। भूख भी तेज़ हो जाएगी और व्यसन भी छूट जाएगा।

देवियों का कर्तव्य

यहां आर्य्या भगनियों से एक प्रार्थना करनी है। उन्हों ने यदि कुछ शिक्षा ग्रहण की है तो उन का कर्तव्य है कि अपने गृह को पवित्र रखने के कर्तव्य का पालन करें। जिस गृह में प्रातः सायं हवन से वायु की शुद्धि का उपदेश परमात्मा की ओर से है उस गृह में हुक्के की बदबू फैलाने की आज्ञा न दे। अभी अधिक समय व्यतीत नहीं हुआ कि हिन्दू औरतें अपने मांसाहारी पतियों को घर में मांस खाने की आज्ञा नहीं देती थीं, तब वे अपने तबेलों में मांस की हाड्डियां चढ़वाया करते थे। क्या आर्य्य देवियों का

कर्तव्य नहीं कि अपने आदमियों से स्पष्ट कह दें कि यदि हुक्के की दुर्गन्ध फैलानी ही है तो घोड़ों के अस्तबल में उसे लीद के साथ मिलादें। किन्तु इससे भी पूरा सुधार नहीं हो सकता है। हुकई की सन्तान कानों, आंखों और दिल को गँवा कर उत्पन्न होती हैं क्या ऐसी सन्तान को उत्पन्न करने का किसी को अधिकार है?

तम्बाकू पर अधिक इस लिये लिखा गया है कि इस का विष चुपचाप असर कर रहा है।

खान पान के साथ ही स्नान के विषय पर भी एक ही बार लिख देना उचित है। शरद् ऋतु में एक बार ही स्नान करना पड़ता है। यदि किसी को उस ऋतु में भी दो बार स्नान का अभ्यास हो तो बुरा नहीं। किन्तु ग्रीष्म में दो बार तथा वर्षाऋतु में तीन बार

स्नान करना भी ठीक है। चाहे कितनी बार स्नान करना पड़े।

स्नान ठण्डे पानी से ही करना चाहिये। शरीर को पुष्ट बनाने का इससे बढ़ कर कोई उपाय नहीं। जो लोग बच्चों को गरम पानी से स्नान कराते हैं वे उन बच्चों के लिये सहस्रों रोगों के बीज बोते हैं। ठण्डे पानी से नहलाने पर बच्चों को शिर पीड़ा जुकाम तथा खांसी आदि रोग कुछ नहीं होते। सबसे उत्तम स्नान खुले मैदान हवा में होता है।

ठण्डे पानी में स्नान कराने से जो कभी कभी बच्चों को हानि पहुंचती दीखती है उस का कारण यह है कि माताए नहलाना नहीं जानतीं। नहाने के समय बदन को खूब मलना चाहिए। और बदन अंगोछने के पश्चात्

बच्चों के हाथों और पैरों को नारियल के तेल से रगड़ कर नहला देना चाहिए। अभी दश वर्ष नहीं व्यतीत हुए कि हिन्दुओं की निर्बलता का कारण उनका अधिक स्नान का अभ्यास बतलाया जाता था, किन्तु जापान ने सिद्ध कर दिया कि स्नान शरीर को शुद्ध रखने के कारण उसको अधिक पुष्ट कर सकता है। जापानी को जब अधिक पसीना आकर शरीर दुर्गन्ध युक्त प्रतीत होने लगता है तो वह उसी समय गोता लगा लेता है। जब जल शरीर शुद्धि का साधन है तो उससे वही काम लेना चाहिए। वर्षा ऋतु में पसीना अधिक आता है इस लिए प्रातः सायं स्नान के अतिरिक्त दो पहर के भोजन से पूर्व स्नान करना बड़ा लाभकारी तथा मन की प्रसन्नता का हेतु होता है। शरीर शुद्धि से ही अन्य

सब शुद्धियां सिद्ध होती हैं अतएव हाथ, पांव आदि जो अङ्ग जिस समय अशुद्ध हो उसे उसी समय शुद्ध कर लेना धर्म है। और इस के साथ ही इतना लिख देना भी आवश्यक है कि—

वस्त्र शुद्धि

में आर्यों को अन्य मतावलम्बियों के लिए आदर्श बनना चाहिए। कपड़े रेशमी आदि तो बच्चों को भी नहीं पहनाने चाहिये क्योंकि वह प्रायः शुद्ध नहीं रह सकते। किन्तु सुन्दर वस्त्रों की भी इतनी आवश्यकता नहीं जितनी शुद्ध वस्त्रों की आवश्यकता है चाहे वह कैसे ही मोटे और सादे हों।

वस्त्र शुद्धि पर केवल इतना ही और लिखना है कि यदि अन्य वस्त्र नित्य बदलने की शक्ति न हो तो भी जो उपवस्त्र बदन के साथ सटा

रहता है, उसे अवश्य नित्य बदल लेना चाहिए। यदि इतने वस्त्र न हों कि धोबी के घर अधिक दिनों तक छोड़ सकें तो स्वयम् साबुनादि से धो लेने में भी कुछ गौरव-हानि नहीं समझनी चाहिये। निचले अङ्ग के साथ भी जो वस्त्र सटा रहता है उसे प्रातः सायं दोनों समय धोना चाहिये। पञ्जाब देश के कुछ प्रान्तों में प्रायः देखा गया है कि नहाने के लिये एक लङ्गोटी वा अङ्गौछा रख छोड़ते हैं और एक ही धोती से गुज़ारा करते हैं। यह बड़ा दूषित रिवाज़ है। दोनों काल सन्ध्या के पूर्व धोती, लङ्गोट और उपरना धो लेना चाहिए, चाहे स्नान करना हो वा न। सारांश यह है कि शारीरिक शौच के विषय को तुच्छ नहीं समझना चाहिए, क्योंकि शरीर शुद्धि का अन्य सर्व प्रकार की शुद्धियों के साथ बड़ा गहरा सम्बन्ध है।

वस्त्रों की बनावट

का भी शरीर पर और उसके द्वारा मनादि पर असर पड़ता है। बच्चों को सदैव ऐसे वस्त्र पहिनाने चाहिएँ जिनसे गला, छाती तथा अन्यान्य अङ्ग प्रत्यङ्ग न घुटें और श्वास प्रश्वास के आने जाने में किसी प्रकार की रुकावट न हो। स्त्री पुरुषों को भी वस्त्र ऐसे ही पहिनने चाहिएँ जिन से कोई अङ्ग भी न दबे और न घुटे। तङ्ग पतलून तथा वास्कट पहिनकर अकड़ने से कोई लाभ नहीं, व्यायाम से शरीर ही क्यों न ऐसा कमाया जावे कि ढीले ढाले कपड़ों में भी आप से आप तना रहे। पहिरने के कपड़ों तथा गृह सम्बन्धी सामानों को शुद्ध रखने पर अधिक लिखनेकी आवश्यकता नहीं है, किन्तु इतना और ध्यान दिलाना है कि जिस प्रकार ब्रह्मचारियों के लिए 'समवेष' (पहिरावे में एकता) निश्चित हो चुकी है उसी प्रकार

गृहस्थ स्त्री पुरुषों के लिए भी आर्य्य मात्र 'सम-वेष' निश्चय कर लें तो बड़ा ही उत्तम हो। यह वेष में समता कोई कमेटी काउन्सल कर, वा व्याख्यानादि से उत्तेजित करके नहीं हो सकती। इस संशोधन का ठीक प्रकार यह है कि कुछ परिवार सोच विचार कर एक प्रकार की पोशाक मर्दों, औरतों और बच्चों के लिये नियत करके आचरण में लावें, दश वर्ष पीछे वही आर्य्यों का वेष हो जायगा।

वायु शुद्धि के लिये

जहां नित्य हवन आवश्यक है वहां मकान हवादार होना भी ज़रूरी है। किराये का घर भी लेना हो तो देख लेना चाहिये कि जहां तक हो सके वेद की आज्ञा के अनुकूल ऐसा बना हुआ हो कि उस के प्रत्येक कमरे में वायु खुली तौर पर आ जा सके। जिन को परिवार के

लिये शुद्ध अन्न, जल, वायु प्राप्त कराने की शक्ति नहीं है उन का कोई अधिकार नहीं है कि संसार में जन संख्या को बढ़ावें। इस के लिये मनु-भगवान के उपदेशानुसार गृहस्थ को ऋतुगामी अवश्य होना चाहिये। इस विषय में बुद्धि-मानों के लिये अधिक लिखने की आवश्यकता नहीं है।

सायंकाल की सन्ध्या

का समय ऐसे प्रकार से निश्चित करना चाहिये कि उस के पश्चात् मन विक्षिप्त करने वाले सांसारिक कार्य्य न करने पड़ें। सायंकाल अग्नि-होत्र भी प्रायः परिवार समेत करना ही ठीक है। इस से परिवार में परस्पर प्रेम बढ़ता है, फिर व्यालू भी मिल कर इकट्ठे ही करना चाहिये जिस के पश्चात् दश पन्द्रह मिनट तक आराम कर के सर्व गृह सम्बन्धी स्त्री पुरुष टहलने लगें। यह

समय माता के लिये सन्तानों को उत्तम मानसिक शिक्षा देने का बहुत अच्छा है। जिनके घर की स्त्रियां पढ़ी लिखी नहीं हैं वह इसमें से कुछ समय स्त्रियों को मौखिक योग्य शिक्षा देने में लगावें। इसी समय पर कभी२ उत्तम आर्य्य परिवारों को एक डेढ़ घंटे के लिये निमन्त्रण देकर परस्पर के मेल को बढ़ाना चाहिये। सदाचार का अपनी सन्तानों में संचार करने का इस से बढ़ कर समय नहीं है।

सोने के समय से पहिले ही गृहपत्नि का धर्म है कि सब बच्चों के हाथ, पैर और मुंह धो कर, उन से ईश्वर प्रार्थना के मन्त्रों का उच्चारण करावे, सन्तानों को पहिले से ही शिक्षा दी जावे कि वह सोने से पहिले सर्व बड़ों को श्रद्धा पूर्वक नमस्ते करें, फिर सब से पीछे माता देवी के पैर छूकर नमस्ते कहें, और माता प्रेम

पूर्वक आशीर्वाद देकर उन को सुला देवें। और यहां मुझे अभिवादन (बड़ों को नमस्ते करना) के विषय में कुछ अधिक लिखने की आवश्यकता है। ऋषि दयानन्द का उपदेश है कि गृहस्थ स्त्री पुरुष जब-जब दिन में मिलें तब तब ही एक दूसरे को नमस्ते पूर्वक अभिवादन करें। इस नियम का पालन आर्यसमाज में बहुत कम किया जाता है। कारण यही प्रतीत होता है कि जिन पुरुषों को बचपन से ही अभिवादन की आदत न हो उन को बड़ी आयु में एक दूसरे के सत्कार के नियम सिखलाना बूढ़े तोते के पढ़ाने से कम कठिन नहीं है। मेरा यह तात्पर्य नहीं कि बड़ी आयु में शिक्षा हो नहीं सकती। मैंने कुछ आर्य ऐसे बूढ़े देखे हैं जिन्हों ने बड़ी उम्र में सत्कार के नियम सीखे हैं, किन्तु जिन बच्चों को छोटी उम्र से ही अभिवादन की शिक्षा दी

जाय, बड़ी आयु होने पर दूसरे का योग्यमान्य तथा सत्कार करना उन का स्वाभाविक गुण हो जाता है। और इस से अनगिनित लाभ होते हैं। मनु भगवान कहते हैं।

अभिवानशीलस्य नित्यंवृद्धोऽपिसेविनः।
चत्वारितस्य वर्द्धन्ते आयुर्विद्यायशोवलम्॥

अभिवादन जिस के स्वभाव में ही हो, तथा नित्य वृद्धों का जो सेवन करे उसकी उम्र, विद्या, यश और बल नित्य बढ़ते रहते हैं। यहां वृद्ध से मतलब श्वेत (सफ़ेद) केशधारी से नहीं है प्रत्युत वृद्ध से मनु महाराज का मतलब उस पुरुष से है जिसकी बुद्धि बढ़ी हुई हो। मनु के कथनानुसार अभिवादन ही एक मोहिनी मन्त्र है जिस के वश में सर्व उत्तम गुण हो सकते हैं। अभिवादनशील मनुष्य कठोर से कठोर हृदय को भी मोम बना देता है। इस समय नास्तिकपन की जो लहर चल

रही है उसका अधिक कारण हमारी सन्तानों का अभिवादन शील न होना ही है। इस समय के युवकों तथा अधेड़ोंके घमण्ड की बुनियाद बचपन में ही पड़ चुकी थी। जिसको यह लोग स्वात्ममान्यता (Self-respect) समझते हैं वह बुरे प्रकार का स्वाभिमान तथा आत्मश्लाघा ही है। सारांश यह है कि बाल, युवा, नर, नारी सब के लिए अभिवादन शील हो कर नित्य अपने से बड़ों की सेवा करना आवश्यक धर्म है।

पति, पत्नि भी प्रेम पूर्वक एक दूसरे को नमस्ते करके ही शयन करें। सोने के लिये

खटिया यथायोग्य होनी चाहिये

गृहस्थ स्त्री पुरुष तो भले ही निवार के पलङ्ग तथा अन्य खटिया, बान वा सूतली सेबुनी हुई, प्रयोग में लावें, यद्यपि उन के लिये भी कठोर खाट लाभदायक ही हो सकती है। किन्तु अवि-

वाहित लड़कों को कभी भी लचकदार पलङ्ग तथा नरम गदेलों पर न सुलावें। दश वर्ष की आयु के पश्चात् तो बराबर सख्त तख्त के ऊपर ही सुलाना चाहिये। इस से वीर्यरक्षा में बड़ी सहायता मिलती है। मैं जानता हूँ कि इस समय आर्य्यों के सौ पढ़ने के योग्य लड़कों में मुश्किल से दो ऐसे होंगे जिन्हें गुरुकुल में नियम पूर्वक प्रविष्ट होना मिला है, अतएव आर्य्य गृहस्थों की सन्तान घर पर रह कर ही स्कूलों तथा कालिजों में शिक्षा ग्रहण कर रही है। उन के लिए भी उत्तम नियमों का पालन बहुत लाभदायक हो सकता है।

बिछौना भी सदैव स्वच्छ रहना चाहिये

जिन दिनों (ज्येष्ठ तथा आषाढ़) गर्मी अधिक पड़ती है उन दिनों के अतिरिक्त शेष सर्व ऋतुओं में रात को बिछौना नमदार हो जाता

है इस लिये नित्य घर के बिछौने कुछ काल धूप में रख देने चाहिये। फिर उन्हें झाड़ पोंछ तथा लपेट कर नियम पूर्वक रख देना चाहिये। यदि नौकर रखनेकी शक्ति न हो तो गृहके स्त्री पुरुषों को बारी २ इस काम का भी व्रत धारण करना चाहिये और इस स्थानमें यह नियम नहीं भूलना चाहिये कि हर चौथे दिन न हो सके तो हर सातवें दिन बिछौने की चादरें सिरहानेके गिला-फ़ादि बदल दिये जावें। ठीक तो यही है कि दरी आदि सबसे नीचे का बिछौना भी सातवें दिन ही बदला जावे किन्तु यदि ऐसा करने की शक्ति न हो तो एक मास के पश्चात् दरी भी अवश्य बदलनी चाहिए।

सोने का स्थान सदैव हवादार

होना चाहिए। दिन को तो मनुष्य प्रयत्न पूर्वक भी श्वास ले सकता है किन्तु सोते हुए

श्वासका ठीक चलना अभ्यास तथा खुली जगह पर निर्भर है। जलादिसे भी बढ़कर वायु जीवन का हेतु है। गर्मियों में खुले मैदान, आकाश की छत के नीचे ही, सोना चाहिए। बरसातादि में जब ओस पड़ने लगे तब बराण्डे में वा सहन में बरसाती लगा कर सो जाओ। किन्तु जाड़े में मकान के अन्दर ही सोना चाहिये वैसे तो जाड़े की ऋतु स्वास्थ्यके लिये अत्युत्तम है किन्तु फिर भी उन दिनों बच्चों की बीमारी अधिक सुननेमें आती है। कारण यह कि प्रथम तो माताएँ बच्चों को झूठे प्रेम के शिकञ्जे में ऐसा कसती हैं कि उसका वैसे दम घुंटता है और उस पर अधिक यह कि दर्वाजे खिड़की यहां तक कि रोशनदान भी बन्द करके सोती हैं। आर्य्य पुरुषोंको अपने आचार तथा प्रचार से इस दूषित व्यवहार को दूर करना चाहिए। रज़ाई में मुंह छिपाकर कभी मत

शयन करो। मुँह को बड़ी से बड़ी सर्दी में भी सिंहवत् खुला रहने दो। दर्वाज़ा भले ही बन्द कर लो किन्तु रोशनदान तथा खिड़कियां सब खुली रक्खो वायु को खुले बन्दों आने-जाने दो, फिर देखो प्रातः काल तुम्हारा सारा परिवार कैसा आलस्यहीन उठता है। वायु जितनी मिले उतनी ही थोड़ी। स्वच्छ वायु से बढ़कर आयु-वर्धक और कोई भी अमृत नहीं है।

रात को गृह में शान्ति का राज्य

होना चाहिये। कुछ कोलाहल नहीं होना चाहिये। यह समय मन तथा इन्द्रियों को आराम देकर दूसरे दिन के काम के योग्य बनाने का है।

नित्य कर्म्म के विषय में इस से अधिक लिखने की मुझ में सामर्थ्य नहीं, किन्तु इतना भी क्या कुछ कम है। एक कर्तव्य का पालन मनुष्य को

अन्य तीसियों कर्त्तव्यों के पालनके योग्य बनाता है, इस लिये मुझे दृढ़ आशा है कि जो मनुष्य इन वैदिक उपदेशों पर चलने के लिये पहिला पग आगे रक्खेंगे, उनको एक विचित्र आकर्षण शक्ति आप से आप आगे को खींचेगी।

कम समझ आदमियों ने गृहस्थाश्रम को दुख का मूल वर्णन किया है। यदि वास्तव में गृहस्थ दुःख का मूल ही होता तो उस के लिये ऊपर कहे प्रयत्नों की आवश्यकता न थी। किन्तु मनु भगवान का गृहस्थ के विषयमें बहुत ही उत्तम विचार है। वह लिखते हैं:—

यस्मात् त्रयोऽप्याश्रमिणो दानेनान्नेन चान्वहम्।
गृहस्थे नैवधार्यन्ते तस्माज्ज्येष्ठाश्रमो गृही॥

जिससे ब्रह्मचारी, वानप्रस्थ और संन्यासी इन तीन आश्रमियों को अन्न वस्त्रादि दान से नित्य प्रति गृहस्थ धारण पोषण करता है इस

लिये व्यवहार में गृहस्थाश्रम सब से बड़ा है। इसी लिये मनु भगवान फिर ज़ोर से लिखते हैं कि—

सर्वेषामपिचैतेषां वेदस्मृति विधानतः।
गृहस्थ उच्यते श्रेष्ठः सत्रीनेतान् विभर्तिहि॥
नदी नदाः सर्वे सागरे यान्ति संस्थितिम्।
तथैवाश्रमिणाः सर्वे गृहस्थेयान्ति संस्थितिम्॥

'वेद और स्मृति के प्रमाण से सर्व आश्रमों में गृहस्थाश्रम श्रेष्ठ है क्योंकि यही (बाकी) तीन आश्रमों का धारण और पालन करता है। जैसे नदियां तथा बड़े नद सब मिल कर समुद्र में जाकर ठहरते हैं इसी प्रकार सर्व आश्रमी गृहस्थ ही को प्राप्त होकर स्थित होते हैं"। गृहस्थ की इतनी प्रशंसा को केवल अत्युक्ति ही न समझनी चाहिये। मनु महाराज का वास्तविक विश्वास था कि गृहस्थ धर्म से बढ़ कर कोई धर्म नहीं है।

वेद स्पष्ट आज्ञा देते हैं कि गृहस्थ को धारण करते हुए घबराओ नहीं किन्तु साथ साथ उस के धारण करने के लिये बल पहिले से प्राप्त करो । गृहस्थ इस समय क्यों नर्क का मूल दीख रहा है ? इस लिये कि जो मनुष्य गृहस्थ को धारण कर रहे हैं वे उस के योग्य नहीं । आज कहने सुनने पर भी बहुत पुरुष अपने आप को ब्रह्मचर्य्य, वानप्रस्थ तथा संन्यास आश्रम के अयोग्य बतला कर अपने कर्तव्यों को टालते हुए दिखाई देते हैं किन्तु गृहस्थ में प्रवेश करते समय बालक तथा वृद्ध किसी को भी किञ्चत् मात्र संकोच नहीं होता। जहां दश वर्ष के बालक को उस के माता पिता निःशंक होकर नौ व दश वर्ष की बच्ची के साथ जोड़ देते हैं वहां सत्तर वर्ष का बूढ़ा भी निर्लज्ज होकर दश वर्ष की कन्या को व्याहने के लिये

तय्यार हो जाता है; ऐसी अवस्था में क्या हम सब शुद्ध हृदय से कह सकते हैं कि आज कल एक भी सच्चा गृहस्थ विद्यमान है। इसी लिये तो मनु महाराज कहते हैं:—

स संधार्यः प्रयत्नेन स्वर्गमक्षयमिच्छता।
सुखंचेहेच्छता नित्यं योऽधार्यो दुर्बलेन्द्रियैः॥

"हे स्त्री पुरुषो! यदि तुम अक्षय मुक्ति सुख और इस संसार के सुख की इच्छा रखते हो तो उस गृहस्थाश्रमको नित्य प्रयत्नसे धारण करो, जो दुर्बलेन्द्रिय और निर्बुद्धि पुरुषों के धारण करने के योग्य नहीं है।"

कैसा स्पष्ट वाक्य है? जिसका शरीर और जिसका मन, बुद्धि समेत, बलवान हो, वही गृहस्थ ज्येष्ठ आश्रमके बोझ को उठाने के योग्य हो सकता है। मूर्ख और बलहीन पुरुष में उस बोझ के उठाने की शक्ति ही नहीं है। सम्भव

है कि एक बुद्धि हीन, दुर्बलेन्द्रिय पुरुष ब्रह्म-चर्य्याश्रम में प्रवेश करके अपने आचार्य्य की कृपा तथा प्रेम का पात्र बन कर मरण पर्यन्त ब्रह्मचारी रह सके, किन्तु एक मूर्ख कमज़ोर मनुष्य का गृहस्थ धर्म पालन करना सर्वथा असम्भव है।

आर्य्य पुरुषो! यह माना कि सारे संसार में जहां तक वैदिक शिक्षा से लोगों ने मुख मोड़ा वहां तक ही बराबर उनका दुःख बढ़ता गया, किन्तु क्या तुम्हारा अन्य पुरुषोंसे कुछ भेद है! यदि नहीं तो तुममें आर्यपन क्या है? मैंने माना कि तुम्हारे माता पिता ने तुम्हें तुम्हारी सलाह के बिना ही गृहस्थ में जोत दिया, यह भी माना कि तुम में से जिन्होंने स्वयम् गृहस्थ रूपी सम्बन्ध जोड़े उन्होंने अज्ञानवश अपनी शक्तियों को नहीं समझा। फिर क्या करना चाहिये?

गृहस्थ के लिये ब्रह्मचर्य्याश्रम तय्यारी का समय है। तुम बिना तय्यारी गृहस्थ युद्ध में सम्मिलित हो रहे हो। उस समय तुम को अपने कर्त्तव्य का ज्ञान न था, किन्तु इस समय तो तुम्हें यह बहाना भी सहारा नहीं दे सकता। अब तुम्हारी आंखें खुल चुकी हैं। प्रश्न फिर वही है कि अब क्या करना चाहिए। मेरी सम्मति में तुम में से जितने बुद्धि तथा बल हीन हैं उन्हें पर-स्पर (पति, पत्नी) विचार पूर्वक

फिर से ब्रह्मचर्य्य व्रत धारण

करना चाहिए। पति और पत्नि दोनों को अपने विषय में एक दूसरे के लिए आचार्य्य बनना चाहिए। ये शब्द तुम्हें घबराहट में अवश्य डालने वाले होंगे किन्तु चौंको नहीं। तुमने वैदिक धर्म को ग्रहण किया है, इस लिये पौराणिक संस्कारों से मुक्त होना तुम्हारा

कर्त्तव्य है। जब तक दोनों की बुद्धि स्वच्छ न हो जाय, जब तक दोनों के शरीर बलिष्ठ, धार्मिक सन्तान उत्पन्न करने में समर्थ न हो जाएँ, तब तक ब्रह्मचर्य्य पूर्वक एक दूसरे का संशोधन करते चले जाओ। यही सदाचार है, यही तुम्हारा अन्य पुरुषों से भेद कराने वाला कर्म है। मनु जी फिर कहते हैं—

आचाराल्लभते ह्यायुराचारादीप्सिताः प्रजाः।
आचाराद्धनमक्षय्यमाचारो हन्त्यलक्षणम्॥

"धर्माचरण से ही दीर्घायु (बड़ी उमर) उत्तम प्रजा (सन्तान) और अक्षय धन को मनुष्य प्राप्त होता है और (साथ ही) धर्माचार बुरे अधर्म युक्त लक्षणों का नाश कर देता है।"

आर्य्य पुरुषो! आचार शुद्धि में मन से लग जाओ तब तुम आर्यपद ग्रहण करने की ओर चल सकोगे और न केवल अपना ही यह

लोक तथा परलोक सुधार सकोगे, बल्कि अपने पड़ोसियों को भी बिना अपना मुख खोले वैदिक धर्म्म की शरण में ला सकोगे।

शमित्योम्।

म० नारायण स्वामीजी महाराज

लिखित उपयोगी पुस्तकें

आत्मदर्शन

यह पुस्तक स्वामी जी ने वर्षों के स्वाध्याय के बाद वानप्रस्थ आश्रम में लिखी है। संसार के विभिन्न-विभिन्न मतों, फिलासफी तथा साइंस में आज तक आत्मा के विषय में जितनी भी थियोरिएँ निकली हैं, उन सब का इस पुस्तक में विचार किया गया है। प्रत्येक अध्याय में एक से एक बढ़कर शिक्षाप्रद और उपयोगी बातें हैं। हिन्दी में इस विषय का यह सर्वोत्तम ग्रन्थ है। देश की किसी भी भाषा में अभी तक इसके जोड़ का ग्रन्थ प्रकाशित नहीं हुआ। इसका चौथा संस्करण अभी छपा है। मूल्य १।) सजिल्द १॥)।

अमृत वर्षा

यों तो स्वामीजी की सभी पुस्तकें एक से एक बढ़कर हैं। किंतु सर्व साधारण, स्त्री पुरुषों

के लिए जितनी यह पुस्तक उपयोगी है दूसरी नहीं। इस में प्रभु का स्मरण, भक्ति का सच्चा उपाय, आत्मबल को आवश्यकता, आगे बढ़ो, दुःखों की औषधि, ईश्वर प्राप्ति के साधन, सच्ची शांति का सच्चा उपाय, अभ्यास का महिमा. वैदिक धर्म की विशेषता आदि ३० विषयों का विस्तार पूर्वक उल्लेख किया गया है। पुस्तक क्या है आत्मशांति का स्रोत है। छपाई बहुत बढ़िया मूल्य ।||)

मृत्यु और परलोक

मृत्यु का वास्तविक रूप, मृत्यु दुःख प्रद क्यों प्रतीत होती है, मरने के बाद क्या होता है, प्राण छोड़ने के समय प्राणी की क्या हालत होती है, भूत प्रेत क्या हैं, आत्मा को एक योनि से दूसरी योनि तक पहुंचने में कितना समय लगता है, जीव दूसरे शरीर में जाता क्यों है आदि का महत्व पूर्ण प्रश्नों पर इस पुस्तक में विचार किया गया है पुस्तक पढ़ने योग्य है। मू० ।||=)

प्राणायाम विधि

मन को शुद्ध तथा शरीर को तन्दुरुस्त रखने और नाना प्रकार के रोगों तथा व्याधियों

से छुटकारा पाने का एक मात्र उपाय प्राणायाम है। प्राणायाम क्या है और किस प्रकार करना चाहिए—यही इस पुस्तक में बताया गया है। मूल्य ≈)

आर्यसमाज क्या है

पुस्तक का विषय नाम से ही स्पष्ट है। यह आर्यसमाज से अपरिचित पुरुषों को आर्यसमाज के नियमों और मोटे मोटे सिद्धान्तों से परिचित कराने का अच्छा साधन है। पुस्तक में जिन विषयों का समावेश है उन्हें खोल कर प्रगट करने का प्रयत्न किया गया है। पुस्तक दूसरी बार सुन्दर छपी है। मूल्य प्रचारार्थ ।-)

पता—

राजपाल एण्ड संज़,

सरस्वती आश्रम हस्पताल रोड, लाहौर

Economic Reforms in India

Dr. Ramakar Raizada
R.I.E., Bhopal

Indian Economy working on the lines of mixed economy has joint existence of private and public sectors, which was twisted towards socialist pattern of society But the experiences of the Russian and Indonesian Economy compelled for re-thinking on this issue The international funding agencies were also constantly advising for economic reforms in the country

Mainly there are three aspects of Economic Reforms in current context in Indian Economy, which need attention

a Liberalisation
b Globalisation, and
c Privatisation

A brief description of these may be as under

Liberalisation:

Liberalisations took place in the Indian Economy in two fronts - domestic and trade liberalisation Experiments with the former (Domestic Liberalisation) began in the mid-seventies starting from 1973 when a number of industries were thrown open for participation by large business houses and companies covered under FERA and MRTP Acts In 1975, modifications in licensing procedures and recognition of additional capacities were done The govt allowed exemption from licensing for investment upto Rs 3 Crores in 1978 and to Rs 5 Crores in 1983 It took place with the announcement of Industrial Policy statement for promotion of competition, modernisation and technological upgradation in domestic market

Since 1985, liberalisation process entered a new phase on the demand of consumer durables A number of policy measures were taken with a view to

1 Limiting the role of licensing
2 Expanding the scope for contribution to growth by large business houses
3 Encouraging modernisation
4 Raising the investment limits for the promoting of small-scale sector
5 Providing fiscal incentives for the same
6 Encouraging existing industrial undertaking in certain industries to achieve minimum economic level of operation

Some important liberalisation measures are·

1 De-licensing a number of industries since June 1988 The industries subject to statutory licensing reduced to 18

2 Since June 1988 the exemption limits for industrial licensing has been raised to 25 crores (form 5 crores) for units set up in advanced and 75 crores in backward areas
3 Broadbanding to 40 industries with a view to provide flexibility to produce a range of products
4 Liberalised the operations of MRTP Act, as
   a Expansion of product upto 25% will not be the subject for MRTP clearance
   b Expansion of large business house
5 IPR, 1973 opened a large number of industries for the big industrial houses Initially there were only 19 industries which incerased to 35 including core as well as export potential industries
6 Raising investment limits for small-scale sector and providing fiscal incentives for growth
7 100% export oriented industries were exempted from licensing the limit lowered to 60 in 1990
8 Making it easier to import foreign technology for modernisation and upgradation of quality
9 Power sector has been thrown open for private sector of India and overseas

The process of liveralisation was further accelerated with the announcement of New Industrial Policy in July, 1991 Certain important factors of the policy are

1 Licensing abolished for all industrial projects except for the industries related to strategilc concern, social reasons, hazardous chemicals and overriding environmental reasons and items of elitist consumption
2 In case of imported capital automatic clearance will be given where foreign exchang availability is ensured through foreign equity
3 Existing units will be provided a new broadbanding facility to enable them to produce any article without additional investment
4 All substantial expansions of existing units will be exempted from licensing
5 All existing registration schemes will be abolished
6 The enterprises will be required to file only the information memo on new projects
7 The mandatory convertibility clause will no longer be applicable for term loans from the financial institutions for new projects

Trade liberalisation ordinarily means reducing restrictions on trade or making trade free than before It is a policy change, which will make the country's trade system more neutral or free A completely neutral system is called free trade system and a move towards neutrality means trade liberalisation About 19 countries of the world have moved to this When markets are protected international division of labour is banned and countries move towards inefficient specialisation The developed and developing, both types of countries like protectionism But it is not only economically inefficient but also unjust as the poor consumers are compelled to pay higher prices if cost of production is higher in their country.

India's import policy may be characterised as one of the gradual liberalisation of a complicated licensing, high tariff import regime Even now import of most of the consumer goods is prohibited. A shift in the favour of price mechanism as against quantitative restrictions in recent years is a clear indication of the move towards liberalisation

India's export policy is export oriented for greater performance and the exports of readymade garments, leather goods and textiles have picked up very fast in the recent past Mere subsidies cannot work until restrictions are removed and rules are simplified

But complete liberalisation is difficult as India had a long history of regulated imports and incentive oriented exports Multinationals will enter the domestic market both in goods and services For this a suitable climate for the long-term goal of self-reliance is to be created Viewed in this context the emphasis of liberalisation policy is on improving technology and efficiency, competitiveness of domestic industries over a wide range and building the base for greater self-reliance.

The socialist thinkes attack the policy of liberalisation on the ground that it will help only the luxurious goods and the needs of weaker section will be ignored which are more acceptable on the social cost benefit appraisal A sudden break to the protectionist policy is not desirable but a slow liberalisation is called for in our economy The world is experiencing globalisation of trade, investment and floating currencies and India cannot afford to isolate herself

Globalisation of Indian Economy:

It implies that the commodities as well factor market are functioning under the influence of the market forces of world economy without any barrier imposed by the state or nation The production units gain efficiency and become competitive Exports increase, foreign exchange problem gets solved and adequate foreign capital becomes available Country achieves the external equalibrium and moves to higher growth path with stability With this expectation the Indian Economy is also being globalised to get rid of Balance of Payment disequalibrium which resulted into severe BOP crisis time and again It distorted the planning process and effected smooth functioning of the economy

In India, we need first to create a competetive micro economy and a stable macro economy with no vested interests. Liberalisation had to be undertaken Globalisation is taking place on the firm level encouraged by technological development and the industry had to face competition from outside, subject to some degree of protection Integration of Indian economy with the world economy has been put forth very strongly in official circles as well as the IMF and World Bank

Globalisation is a two-way action plan - (a) Free competition, high productivity and (b) Selling in one single market for the whole world It should accelerate and boost the pace of economic development as competition from abroad would lead to improvement in quality,

productivity, efficiency and cost effectiveness which in turn will boost the exports and foreign exchange earning and steer our economy out of the present crisis But the inherent character of Indian economy prohibits the introduction of advanced technology of developed nations Therefore, globalisation is essentially needed Indian companies will become multinationals production centres and can attract the foreign capital

The strategy adopted since July 1991 for integration of economy with the world economy includes exchange rate adjustments, competetiveness of exports, reduction of tariffs and a more open policy towards direct foreign investment and technology India cannot expect large inflow of external funds with the irrational exchange rate policy Faster export growth and free access to imports is necessary and accordingly the import duties have been substantially brought down Free flow of direct foreign investment is also required which is permitted by the new IPR, 1991 New technology will also come, but the cumbersome approval process involving delays and uncertainty is a great obstacle In the new policy automatic approval will be given for technology agreements related to high priority industries and to non-priority sector also if expenditure in foreign exchange is not required

The new economic policy advocates market friendly approach of removal of bureaucratic controls to attract foreign capital and technology The policy should also have facilities of easy movement of goods through reductron of tariffs There will be less social protection for in-efficiency and more noticabe fight for innovatin and competitiveness

India's globalisation efforts are hindered by lack of favourable international environment where advanced countries like US are adopting a protectionist policy, it will be difficult for Indian Economy The role of multinationals is also not felt suitable for developing economy of India World market situations, withdrawal of subsidy rising of prices may also be not liked

Privatisation:

Participation of private sector in the developmental process is not as option but it is an essential requirement as it improves productivity, efficiency, cost consciousness, competetivenes and effective management Under privatisation the public enterprises with financial difficulties are transferred to private, not the reverse International lending agencies like World Bank have increasingly brought in privatisation of public enterprises as a condition for their project lending in several countries As the WB experts suggest it, the privatisation is essential to attain productivity and efficiency After experimentation with nationalisation for forty years during 1980s worldwide experiments have statred with privatisation

<u>Objectives</u>

1 Improvement of Economic performance of Assets
2 Depoliticalisation of Economic Decisions
3 Reduction in public outlay, taxes and borrowing requirements
4 Promotion of popular capitalism through wider ownership of Assets

5 Promotion of Equity.

International Experience

Started in 80's to increase efficiency, competetiveness, means of earning, reduce budgetory deficit, wider share of ownership of economic assets and to eliminate political interferences Mrs Thatcer (UK) and Ronal Reagon (USA) have championed it France denationalised banking and insurance sectors and some profit making industries Similar experiments with privatisation also started in Italy, Spain, Sweden, Germany, Netherlands, Ireland, Austria and Japan

In developing economy it is pursued because of the budget deficit Experiments with privatisation started in Balgladesh. Pakistan, Thailand, Malaysia, Latin America and African countries In India since 1985 through loosening of controls in the area of industrial licensing, liberalisation of import controls reduction in income and corporate tax rates and long term fiscal policy Through developmental strategy of planning created many high cost inefficient industries, sheltered them from foreign competetion Self-reliance was perverted into self-sufficiency Tax revenue as a share of GDP had risen The solution of sickness in public sector is privatisation, as closing down will involve social cost of loss of employment of lakhs of people Govt of India has ruled out any overnight possibility of handing over the PSUs to the private sector The PS requires radical re-structuring and re-orientation through the followings

a Assets of Govt Enterprises are sold or tranferred to private owners
b De-nationalisation or De-regulation
c Relaxation in resept of the industrial sectors reserved for development in the state sector
d Leasing of Public Enterprises to Private Sector parties.
e Transfer of management and control of a PE to Private agency

Privatisation is a present day need in developed and developing countries, it is a reform that necessitates a re-distribution of income and usually a change in employment pattern

Rationale

a State owned enterprises instead of accumulating surpluses or supplying services efficiently have become a drain on national exchequer
b Instead of generating adequate surplus to finance the development expenditure and lessen the tax burdens they have increased the tax by incurring continuous losses
c Their performance in generating profits improved till the mid-seventies and then started detoriating Return on investment varied from 2 to 4 %
d Govt management was to be replaced by privatisation for autonomy, accountability and efficiency
e Govt as impersonal entity is not able to discharge the role of entrerpreneur and owner
f Privatisation may dilute the effect of the strength of Trade Union, which is necessary for productive efficiency in developing countries

Privatisation or transfer of the productive activities to private sector is believed to improve economic efficiency, exercise of greater autonomy and reduction of policital interference. Economic environment in India is entirely different, a well developed capital market is necessary which is not available in the country. Therefore, a part of the Govt's shareholding in the public sector would be offered to mutual funds, financial institutions, general public and workers The process of privatisation is started slowly due to public sector employee's resistence, the Videsh Sanchar Nigam Ltd and Bharat Sanchar Nigam Ltd. have been established for telephone services It may come slowly to Railways also in due course of time The Privatisation or Peoplisation is recommended to solve the problem of in-efficiency in Public Sector The idea of Joint Sector is also not bad

---

भारत में आर्थिक आयोजन
(Economic Planning in India)

डॉ रमाकर रायजादा,
क्षेत्रीय शिक्षा सस्थान, भोपाल।

किसी भी देश के आर्थिक विकास मे आयोजन का महत्वपूर्ण योगदान है। भारत मे लम्बे समय तक विदेशी शासन और शासको की मुक्त व्यापार नीति के कारण स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात आयोजन की महती आवश्यकता को पहचाना गया। परिणामस्वरूप मार्च 1950 मे योजना आयोग का गठन हुआ जिसमे साधनो का उचित मूल्याकन व सतुलित एव सर्वोत्तम उपयोग के लिए पचवर्षीय योजनाओ की सिफारिश की गई तथा 1 अप्रेल, 1951 से 31 मार्च, 1956 तक के लिए प्रथम पचवर्षीय योजना की शुरुआत की गई। हमारी अर्थव्यवस्था मे सार्वजनिक और निजी क्षेत्रो को एक दूसरे का पूरक समझा जाता है। निजी क्षेत्र मे सगठित उद्योगो के अलावा लघु उद्योग, कृषि, व्यापार, आवास तथा निर्माण और अन्य क्षेत्रो की गतिविधिया भी आती है। राष्ट्रीय विकास के लिए व्यक्तिगत प्रयास और निजी पहल के साथ--साथ स्वैच्छिक सहयोग भी आवश्यक है। पहले आर्थिक आधारभूत और भारी उद्योगो मे व्यापक पूजी निवेश के जरिये सार्वजनिक क्षेत्र के विकास की व्यवस्था की गई किन्तु अव यह सोचा जा रहा है कि आयोजन अधिकाधिक निर्देशात्मक ही हो।

प्रधानमन्त्री श्री अटलविहारी वाजपेयी योजना आयोग के अध्यक्ष हैं एव श्री मोटेक सिह अहलूवालिया को अगस्त, 1998 मे पूर्णकालिक सदस्य नियुक्त किया गया है।

आयोजन की प्रकृति

भारतीय आयोजन प्रकिया रूस के सिद्धान्तो पर आधारित होते हुए भी इससे दो अर्थो मे भिन्न है–

1 भारत मे ससदीय जनतात्रिक प्रणाली होने के कारण आयोजन के लक्षण समाजवादी होने के साथ–साथ विधि और प्रकिया मे जनतात्रिक हैं तथा राज्य या केन्द्र सरकार के द्वारा किसी नीति को थोपा नही गया बल्कि सामाजिक रूप से स्वीकार्य होने पर ही लागू किया जाता है।

2 भारत मे विशाल सार्वजनिक क्षेत्र है जहा पर आयोजन का प्रत्यक्ष प्रभाव होता है तथा इसके साथ ही निजी क्षेत्र कृषि, छोटे वडे उद्योग, निर्माणी व्यवसाय और अन्य क्षेत्र भी है जो कि निजी लाभ के लिए काम करते हैं। इन पर नियोजन का कोई प्रत्यक्ष प्रभाव नही हो सकता है। मूल्य तन्त्र और निजी उत्साह इस क्षेत्र मे प्रमुख भूमिका निभाता है।

भारतीय आयोजन मे प्रथम पचवर्षीय योजना केवल कृषि क्षेत्र की प्रगति का लक्ष्य लिए हुए थी तथा इसमे किसी प्रकार की नियोजन व्यूहरचना का आभास नही था किन्तु द्वितीय पचवर्षीय योजना से व्यूहरचना मे समाजवादी दृष्टिकोण और कृषि के हटकर उद्योगो की स्थापना पर जोर और उसमे भी पूजीगत और मूल आधारभूत उद्योगो की स्थापना पर जोर दिया गया क्योकि इसी से विकास के लिए आधारभूत ढाचा निर्मित किया जा सकता है।

भारतीय परिस्थितियो मे अर्थव्यवस्था मे न तो पूर्ण रूप से समाजवादी प्रणाली अपनाई जा सकती थी और नहि मुक्त व्यापारिक अर्थव्यवस्था इसलिए मिश्रित अर्थव्यवस्था की आर्थिक प्रणाली को अपनाया गया।

यहा की आर्थिक नियोजन की प्रकिया अधिक केन्द्रीकृत और रिजिड न होकर लचीली है तथा लोगो के एच्छिक सहयोग पर आधारित है। यह इग्लैण्ड की पूजीवादी और रूस की समाजवादी अर्थव्यवस्था का सम्मिश्रण या उनके बीच का रास्ता है। इस बीच के रास्ते पर भी लम्बे समय तक नही चला जा सकता। निजी और सार्वजनिक क्षेत्र एक दूसरे के साथ प्रतिस्पर्द्धा मे होग तथा उन मे से किसी एक की ओर अर्थव्यवस्था झुक जावेगी। इसमे यह विचार रहा था कि यह समाजवादी समाज की स्थापना करेगी। किन्तु सोवियत रूस के विघटन के पश्चात यह महसूस किया गया कि आर्थिक प्रणाली खुली और पूजीवादी नीति की ओर अग्रसर होनी चाहिए इसीलिए 1991 के पश्चात निजी क्षेत्रो का प्रधानती दी जा रही है जो हमारी औद्योगिक नीतियो से स्पष्ट हो रहा है।

इसके साथ ही भारतीय नियोजन प्रणाली पूर्णत विकेन्द्रीयकृत और लचीली व्यवस्था है। इसमे नियोजन के केवल नीति निर्देशक सिद्धान्त (Broad Parameters) तथा उद्देश्य ही केन्द्रित रूप मे तय किये जाते है तथा विस्तृत नियोजन रूपरेखा क्षेत्रीय स्तर पर तैयार की जाती है जिससे प्रत्येक क्षेत्र का नियोजन मे विशेष योगदान रहता है।

प्रथम पचवर्षीय योजना :

वर्ष 1951 मे बडी मात्रा मे खाद्यान्न के आयात तथा अर्थव्यवस्था पर मुद्रास्फीति के दबाव को ध्यान मे रखते हुए पहली योजना (1951–56) मे कृषि सहित सिचाई तथा बिजली परियोजनाओं को सर्वोच्च प्राथमिकता दी गई। सार्वजनिक क्षेत्र मे व्यय के लिए निर्धारित 2,069 करोड़ रुपये (जो बाद मे बढाकर 2,378 करोड रुपये कर दिया गया) का लगभग 44 6 प्रतिशत इन कार्यो पर खर्च के लिए रखा गया पहली योजना मे पूजी निवेश की दर राष्ट्रीय आय के पाच प्रतिशत से बढाकर सात प्रतिशत करने का भी लक्ष्य रखा गया।

प्रथम योजना की कृषि, सिचाई, और सामाजिक सेवाओ के क्षेत्र मे सफलता के बारे मे कोई शका नही की जा सकती। कृषि का उत्पादन लक्ष्य से भी अधिक हुआ, राष्ट्रीय आय 18 प्रतिशत से, प्रति व्यक्ति आय 11 प्रतिशत से तथा प्रति व्यक्ति उपभोग 8 प्रतिशत की दर से बढे। औद्योगिक उत्पाद सूचकाक भी 1956 मे 139 (1950–51 · 100) तक पहुच गया।

द्वितीय पचवर्षीय योजना :

दूसरी पचवर्षीय योजना (1956–57 से 1960–61) मे विकास के लिए एक ऐसे ढाचे को बढावा देने का प्रयास किया गया जिससे देश मे समाजवादी समाज का निर्माण हो सके। इसका मूल लक्ष्य देश में समाजवादी समाज की स्थापना था। इस योजना के निम्न उद्देश्य निर्धारित किये गये

1 राष्ट्रीय आय मे 25 प्रतिशत की वृद्धि
2 बुनियादी तथा भारी उद्योगो के विकास पर बल देते हुए तीव्र औद्योगीकरण
3 रोजगार के अवसरो का तेजी से विस्तार
4 आय एव सम्पत्ति मे असमानताओ को कम करना तथा आर्थिक अधिकार का समान वितरण

पूजी निवेश की दर को सात प्रतिशत से बढाकर 60–61 तक 11 प्रतिशत करना विचार किया गया। इस योजना मे सार्वजनिक क्षेत्र पर व्यय के लिए रु 4800 करोड़ का प्रावधान था किन्तु वास्तविक व्यय

केवल रु 4600 करोड ही रहा। निजी क्षेत्रो मे निवेश 3100 करोड रुपये के आके गये। कृषि विकास को न्यूनतम प्राथमिकता दी गई थी। इस योजना मे कृषि पर केवल कुल व्यय के 20 प्रतिशत का ही प्रावधान रखा गया जबकि यह प्रथम योजना मे 31 प्रतिशत था। औद्योगिक क्षेत्र का प्रावधान प्रथम योजना मे केवल 4 प्रतिशत था उसे बढाकर 20 प्रतिशत किया गया।

इस योजना अवधि मे राष्ट्रीय आय मे 19 5 प्रतिशत की वृद्धि हुई जबकि प्रति व्यक्ति आय केवल 8 प्रतिशत ही बढी क्योकि इस अवधि मे जनसख्या 10 3 की दर से बढ गई। कृषि की प्राथमिकता को हटाने से भी हानि ही हुई तथा खाद्यान्नो की कीमते काफी बढ गईं। पूरे ससार मे होने वाली मुद्रा स्फीति के दबाब के कारण मशीनो आदि की कीमतो मे भी वृद्धि हुई और अर्थव्यवस्था पर काफी दबाव पड़ा विदेशी विनिमय कोष भी 700 करोड रुपये से घटकर केवल 100 करोड ही रह गया। इसी अवधि मे भिलाई, राउरकेला और दुर्गापुर के इस्पात कारखाने लगाये गये। किन्तु कई वस्तुओ के उत्पादन के लक्ष्य प्राप्त नही किये जा सके, जैसे – उर्वरक, रसायन, पल्प, सीमेन्ट आदि। लेकिन इस योजनाकाल मे पर्याप्त मात्रा मे विदेशी तकनीक का आयात हुआ।

तृतीय पचवर्षीय योजना ·

तृतीय पचवर्षीय योजना 1961–62 से 1965–66 (मूल योजनाकाल 1966–67 तक किन्तु युद्ध आदि के कारण एक वर्ष पूर्व समाप्त करके वार्षिक आयोजन किया गया) का प्रमुख उद्देश्य आत्मनिर्भर विकास की दिशा मे महत्वपूर्ण प्रगति करना था। इसके तत्कालिक उद्देश्य निम्न थे

1 राष्ट्रीय आय मे पाच प्रतिशत वार्षिक से अधिक की वृद्धि करना तथा पूजी निवश की एसी व्यवस्था करना तकि यह वृद्धि बनी रहे।
2 खाद्यान्न उत्पादन मे आत्मनिर्भरता प्राप्त करना तथा उद्योग व निर्यात की आवश्यकता पूर्ति के लिए कृषि उत्पादन बढाना।
3 इस्पात, रसायन, ईधन और विजली जैसे आधारभूत उद्योगो का विस्तार तथा मशीन निर्माण क्षमता को विकसित करना ताकि आगे के 10 वर्षो मे अपने ससाधनो से औद्योगीकरण की आवश्यकता को पूरा किया जा सके।
4 मानव ससाधन का पूरा–पूरा उपयोग करना तथा रोजगार के अवसरो मे पर्याप्त वृद्धि करना।
5 अवसर की समानता का क्रमश विकास करना, आय सम्पत्ति की असमानता को कम करना तथा आर्थिक अधिकारो का समान वितरण करना।

इस योजना का लक्ष्य राष्ट्रीय आय मे लगभग 30 प्रतिशत प्रति व्यक्ति आय मे 17 प्रतिशत कृषि मे 30 प्रतिशत तथा उद्योगो मे 70 प्रतिशत की बढोत्तरी करना था। इस योजना का कुल व्यय रू 10,400 करोड था जिसमे से रू 7,500 करोड सार्वजनिक क्षेत्र के लिए रखा गया। कृषि की प्राथमिकता को भी पहिचाना गया तथा इस पर 36 प्रतिशत का प्रावधान रखा गया। किन्तु इस योजना अवधि मे चीन से 1962 मे तथा पाकिस्तान से 1965 मे लडाई होने से युद्ध व्ययो मे वृद्धि हुई। इसके साथ ही 1961–65 तथा 1965–66 मे मानसून भी प्रतिकूल रहा। राष्ट्रीय आय मे अपेक्षित से आधी वृद्धि ही दर्ज की गई तथा 1964–65 मे तो यह 4 2 प्रतिशत से गिर ही गई। खाद्यान्नो का उत्पादन भी केवल दो प्रतिशत प्रतिवर्ष की दर से ही बढ सका। भूसुधार कार्यक्रमो को भी भली प्रकार लागू नही किया जा सका। औद्योगिक उत्पादन भी केवल 5 7 प्रतिशत प्रतिवर्ष की दर से ही बढ सका जबकि लक्ष्य 14 प्रतिशत प्रतिवर्ष का रखा गया था।

जनसख्या भी अत्यन्त तीव्र गति से बढी 1950–51 और 1960–61 के बीच 235 प्रतिशत की वृद्धि आकी गई जो पिछले दस वर्ष मे केवल 135 और उससे पहले केवल 14 प्रतिशत ही थी। इससे वेरोजगारो की सख्या जो केवल 70 लाख थी, बढकर 100 लाख हो गई। मुद्रास्फीति मे भी काफी (484 प्रतिशत की) वृद्धि हुई।

वार्षिक योजनाएं .

वर्ष 1965 मे भारत पाकिस्तान युद्ध स उत्पन्न स्थिति, लगातार दो वर्षो तक सूखा, मूल्य वृद्धि, ससाधनो का ह्रास, विदेशी मुद्रा की कमी और मुद्रा अवमूल्यन (जून 6, 1966) जैसे कारणो से चौथी योजना का अतिम रूप देने मे विलम्ब हुआ और उसक स्थान पर तीन वार्षिक याजनाए चलाई गई। इस अवधि को योजना अवकाश काल भी कहा जाता है जो कि गलत है तीन वार्षिक योजनाओ का उद्देश्य तीसरी पचवर्षीय याजना के अधूरे उद्दश्यो को पूरा करना था। 1966–67 और 1967–68 मे अर्थव्यवस्था मे गिरावट का ही रुख रहा क्योकि कृषि और औद्योगिक, दोनो ही उत्पादन गिरे। राष्ट्रीय आय मे 67–68 मे 89 प्रतिशत की वृद्धि हुई। तीनो वार्षिक याजनाओ स देश की अर्थव्यवस्था मे सुधार हुआ और पुन नियोजन के योग्य बन सकी।

चतुर्थ पचवर्षीय योजना :

चौथी योजना का लक्ष्य स्थिरता से विकास (Growth with stability) की गति को तेज करना तथा आत्मनिर्भरता के साथ विकास (Self Relience) के माध्यम से विदेशी सहायता की अनिश्चितता के प्रभाव को कम करना था। इनमें समानता और सामाजिक न्याय को बढावा देने के कार्यक्रमो के माध्यम से जीवन स्तर को ऊचा उठाने की कोशिश की गई। इस योजना मे कमजोर एव साधनहीन वर्ग के लोगो की दशा सुधारने, विशेष रूप से उनकी शिक्षा और रोजगार की व्यवस्था करने पर विशेष जोर दिया गया। सम्पत्ति, आय एव आर्थिक शक्ति का केन्द्रीयकरण रोकने और इसके समान वितरण की दिशा मे भी प्रयास किये गये। इस योजना के लिए कुल बजट रु 24,882 करोड रखा गया जिसमे से रु 15,902 करोड सार्वजनिक क्षेत्र के लिए तथा रु 8,980 करोड निजी क्षेत्र के लिए प्रावधान था। योजना मे शुद्ध घरेलू उत्पाद (1968–69 की उत्पादन लागत के आधार पर) की वृद्धि करने और इसे 1969–70 मे 29,071 करोड रूपये से बढाकर 1973–74 मे 38,306 करोड रूपये करने का लक्ष्य था। विकास का औसत चक्रवृद्धि दर 57 प्रतिशत वार्षिक निश्चित किया गया। इस योजनाकाल मे राष्ट्रीय आय को 55 प्रतिशत की दर से तथा प्रति व्यक्ति आय को 3 प्रतिशत वार्षिक की दर से बढाने का लक्ष्य रखा गया।

किन्तु राष्ट्रीय और प्रतिव्यक्ति आय मे वृद्धि लक्ष्य की तुलना मे बहुत ही कम रही जो कि 1972–73 मे तो 1970–71 की तुलना म गिर भी गई (रु 3486 से 2350) कृषि के क्षेत्र मे भी 5 प्रतिशत की लक्ष्य वृद्धि को प्राप्त नही किया जा सका इसके साथ ही गेहू, चावल जूट और कपास के उत्पादन मे गिरावट ही आई। औद्योगिक उत्पादन भी 1970–71 मे तीन प्रतिशत और 1973–74 मे केवल 05 प्रतिशत ही बढा। इसका कारण माग मे कमी, कच्चे माल की कमी, औद्योगिक सघर्ष, सरकार की लायसेन्स नीति, सार्वजनिक क्षेत्रो की कमजोर प्रबन्ध व्यवस्था आदि रहे।

इसके साथ ही 1972 से 1974 की अवधि मे कीमतो मे 50 प्रतिशत की वृद्धि हुई, इसका कारण बडी मात्रा मे हीनार्थ प्रबन्ध (Deficit Finance) कहा जा सकता है तथा जिससे गरीब और स्थिर आय वाले लोगो को बहुत कष्ट सहन करना पडा। प्रति व्यक्ति खाद्यान्नो की उपलब्धि जो 1956 मे 430 9 ग्राम से बढकर 1965–66 मे 480 2 ग्राम हो गई थी वह 1973 मे घटकर 417 8 ग्राम ही रह गई।

पांचवी पंचवर्षीय योजना ·

पाचवी योजना (1974–79) बनाते समय मुद्रा स्फीति का काफी दबाब था। इस योजना का प्रमुख उद्देश्य आत्मनिर्भरता प्राप्त करना तथा गरीबी रेखा से नीचे रहने वाले लोगो की खपत के स्तर मे सुधार करना था। मुद्रास्फीति पर नियन्त्रण और आर्थिक स्थिति मे सुधार के उपायो मे स्थायित्व लाने को प्राथमिकता दी गई। राष्ट्रीय आय मे वृद्धि के लिए 5 5 प्रतिशत वार्षिक का लक्ष्य रखा गया। इस योजना की चार वार्षिक योजनाओ को पूरा किया गया पुन यह फैसला किया गया कि पाचवी योजना को 1978–79 की वार्षिक योजना के साथ समाप्त कर दिया जाय तथा पुन नई प्राथमिकताओ और कार्यक्रमो को लेकर योजना बनाई जाय। इस योजना के लिए कुल रु 47,561 करोड का प्रावधान रखा गया जिसमे से रु 31,400 करोड सार्वजनिक क्षेत्र के लिए था। सार्वजनिक क्षेत्र मे उद्योग और खनन को सर्वाधिक प्राथमिकता देते हुए 24 प्रतिशत का प्रावधान रखा गया।

1973 मे तेल की कीमतो मे अत्याधिक वृद्धि हो गई इससे आयात बिल वहुत अधिक वढ गया। मुद्रा स्फीति का दबाब तो देश मे तथा बाहर भी था ही इससे योजना व्ययो द्वारा निर्धारित कार्यो को पूरा करने में बहुत कठिनाई हो रही थी इसलिए सरकार को कडे कदम उठाने पडे और इससे 1975 तक महत्वपूर्ण सकारात्मक परिवर्तन आये। खाद्यान्नो का उत्पादन भी 118 मिलियन टन तक पहुच गया। घरेलू मुद्रा स्फीति पर भी 1975–76 तक नियन्त्रण कर लिया गया। निर्यातो मे भी वृद्धि दर्ज की गई (1975–76 मे 18 प्रतिशत) इससे भुगतान सतुलन की स्थिति मे भी सुधार आया। इन सब से प्रेरित होकर सितम्बर 1976 मे योजना को पुनरीक्षित किया गया अगले दो वर्षो के लिए नये लक्ष्य निर्धारित हुए। सिचाई, बाढ नियन्त्रण, शक्ति और उद्योग तथा खनिजो के क्षेत्र के लिए महत्वपूर्ण वृद्धि की गई। इसके साथ ही निजी क्षेत्रो के लिए भी अधिक विस्तार के लक्ष्य निर्धारित हुए। किन्तु 1977 मे चुनाव की घोषणा होने के कारण योजना पुन एक अनिश्चितता के वातावरण मे पड गई।

छठी पचवर्षीय योजना

चुनाव के बाद 1980 मे पुन योजना आयोग का गठन हुआ तथा छठी पचवर्षीय योजना लागू की गई। गरीबी हटाओ छठी पचवर्षीय योजना (1980–85) का प्रमुख लक्ष्य था। योजना की कार्यनीति मे कृषि और औद्योगिक ढाचा दोनो को ही मजबूत करना था। इस योजना मे सभी समस्याओ को अलग–अलग सुलझाने के बजाय उन्हे एक समग्र रूप मे हल करने की बात पर विचार किया गया। इसी प्रकार प्रबन्ध कुशलता बढाने, सभी क्षेत्रो की गतिविधियो पर कडी नजर रखने, स्थानीय स्तर पर विकास की विशेष योजनाए बनाने की प्रकिया मे लोगो को सक्रिय रूप से शामिल करने तथा इन योजनाओ को शीघ्रता और कुशलता से लागू करने पर जोर दिया गया। कुल योजना व्यय रु 1,56,000 करोड निर्धारित किया गया जिसमे से रु 67,000 करोड निजी क्षेत्र के लिए था।

योजना व्यय के लिए प्रावधान 1979–80 के मूल्यस्तर पर निर्धारित किये गये थे किन्तु 1980 के अन्त तक मूल्यो मे 13 प्रतिशत की वृद्धि हुई। योजना मे वार्षिक विकास की दर 5 से 5.3 प्रतिशत तक निर्धारित की गई लेकिन वास्तविक वृद्धि लगभग 3.8 प्रतिशत की रही। इस योजनाकाल मे प्रमुख समस्या साधनो की रही। फिर भी योजना की उपलब्धिया मिश्रित रुख लिए हुए थी विद्युत जल गैस और जल आपूर्ति के क्षेत्र मे महत्वपूर्ण प्रगति दर्ज की गई जबकि निर्माणी, खनन तथा भवन निर्माण के क्षेत्रो मे गिरावट आई। कृषि के क्षेत्र मे भी महत्वपूर्ण विकास हुआ। मुद्रा स्फीति मे भी कुछ हद तक नियन्त्रण किया जा सका।

सातवी पचवर्षीय योजना

सातवी योजना (1985–90) मे विकास आधुनिकीकरण आत्मनिर्भरता और सामाजिक न्याय जैसे आयोजना के मूलभूत सिद्धान्तो का पालन करते हुए खाद्यान्न उत्पादन रोजगार और उत्पादकता बढाने की नीतिया और कार्यक्रमो पर विशेष जोर दिया गया। इसी अवधि मे रोजगार के अवसरो के विकास के लिए जवाहर रोजगार योजना जैसे कार्यक्रम भी तैयार और लागू किये गये। इस योजना मे सार्वजनिक क्षेत्र के लिए रु 1,80,000 करोड का प्रावधान रखा गया इसमे रु 1,54,218 करोड निवल पूजी निवेश होना था। इसके उद्देश्यो मे, रोजगार का सृजन, निवेशित परिसम्पत्तियो से अधिक उत्पादन सिचाई, शक्ति, यातायात, उद्योग को बढावा देकर विकास की दर को उठाना खाद्यान्नो के उत्पादन को बढाना जिनमे सामान्य उपभोग की वस्तए (जैसे–खाद्य तेल, शक्कर, टेक्सटाइल, पट्रोलियम आदि) शामिल है। इस योजना की अवधि मे विकास की दर को पाच प्रतिशत प्रतिवर्ष रखने का लक्ष्य रखा गया।

अनुकूल मोसम, विभिन्न प्रमुख कार्यक्रमो पर अमल ओर सरकार तथा किसानो के अथक प्रयासो की वजह से सातवी योजना के दौरान खाद्यान्न उत्पादन 3.23 प्रतिशत बढा। गरीबी तथा बेरोजगारी कम करने के लिए जवाहर रोजगार योजना तथा अन्य कई योजनाए लागू की गई। रोजगार सृजन की दिशा मे महत्वपूर्ण कार्य किये गये।

वार्षिक योजनाए

केन्द्र मे तेजी से बदलते राजनीतिक घटनाक्रम के चलते आठवी पचवर्षीय योजना (1990–95) को क्रियान्वित नही किया जा सका तथा सरकार ने फसला लिया कि आठवी योजना को 1992 से लागू किया जाय तथा 1990–91 तथा 1991–92 को अलग–अलग वार्षिक योजना माना जाय। इन वार्षिक योजनाओ मे मुख्य जोर रोजगार के अधिक अवसर और सामाजिक परिवर्तन के लिए दिया गया।

आठवी पचवर्षीय योजना

यह योजना ढाचागत समायोजन नीतियो और वृहद स्थिरीकरण की नीतियो को शुरू करने के तुरन्त बाद लागू की गई। इस योजना मे भुगतान सतुलन, तीव्र आर्थिक विकास और मुद्रा स्फीति के सकट को रोकने का अधिक प्रयास किया गया इसमे आर्थिक विकास दर 5.6 प्रतिशत और औसत औद्योगिक विकास दर को 7.5 प्रतिशत पर लाने का प्रस्ताव था। इस योजना के दौरान 1991–92 के मूल्यो के आधार पर सार्वजनिक क्षेत्र की समग्र योजना के लिए 4,34,100 करोड रुपये का परिव्यय रखा गया था इसमे केन्द्रीय

योजना का हिस्सा 571 प्रतिशत और राज्यो का 41 15 प्रतिशत तथा केन्द्र शासित प्रदेशो का शेष रहा। इस योजना का निष्पादन केन्द्रीय क्षेत्रो मे 95 प्रतिशत राज्यो और केन्द्रशासित प्रदेशो के मामले मे क्रमश 80 प्रतिशत और 109 प्रतिशत रहा।

नवी पंचवर्षीय योजना :

इसमे कृषि और ग्रामीण क्षेत्र मे आय के स्तर को ऊचा उठाने के गभीर प्रयास किये गये। इनका उद्देश्य लघु, मझोले और सीमान्त किसानो और खेतिहर मजदूरो को लाभ पहुचाना है। इसमे गरीबो और बचित वर्गो का जीवनस्तर सुधारने का प्रमुख लक्ष्य है। विदेशी व्यापार और निवेश नीति पर विशेष बल दिया जायगा ताकि निर्यात मे तेजी लाई जा सके तथा वह निरन्तर लागू रह सके। योजना के उद्देश्यो मे निम्नलिखित बाते शामिल है

1 पर्याप्त अर्थपूर्ण रोजगार पैदा करने और गरीबी उन्मूलन के उद्देश्य से कृषि और ग्रामीण विकास को प्राथमिकता।
2 मूल्यो मे स्थिरता के साथ–साथ अर्थव्यवस्था की विकास दर को तेज करना।
3 सबके लिए विशेषकर समाज के कमजोर वर्गो के लिए खाद्य और पोषाहार की सुरक्षा निश्चित करना।
4 सुरक्षित पीने का पानी, प्राथमिक स्वास्थ्य देख–रेख सुविधा, सबके लिए प्राथमिक शिक्षा ।
5 जनसख्या की वृद्धिदर रोकना।
6 सभी स्तरो पर जनता की भागीदारी और सामाजिक जागरूकता के द्वारा विकास प्रक्रियाओ को ऐसा बनाना जो पर्यावरण के अनुरूप हो।
7 महिलाओ, अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति और समाज की पिछडी जातियो और अल्पसख्यको जैसे अभाव वाले वर्गो का सामाजिक आर्थिक परिवर्तन और विकास के प्रतिनिधि के रूप मे साधन सम्पन्न बनाना।
8 पचायतीराज सस्थाओ, सहकारी सगठनो तथा स्वैच्छिक समुदायो जैसी जनता की भागीदारी वाली सस्थाओ को प्रोत्साहित करना और विकसित करना।
9 आत्मनिर्भरता के प्रयासो को मजबूत करना।

नवी योजना के पहले वर्ष 1997–98 के दौरान वर्तमान मूल्यो पर सार्वजनिक क्षेत्र की वार्षिक योजना के लिए कुल 1,55,904 67 करोड रुपये का परिव्यय रखा गया था । राज्यो और केन्द्रशासित क्षेत्रो के लिए वर्तमान मूल्यो पर 51,670 75 करोड रुपये का योजना परिव्यय है योजना के कुल प्रावधान मे राज्यो और केन्द्रशासित क्षेत्रो का हिस्सा 33 1 प्रतिशत है।

दूसरे वर्ष 1997–98 मे सार्वजनिक क्षेत्र के लिए 1,39,625 85 करोड रुपये का सशोधित परिव्यय रखा गया। राज्यो और केन्द्रशासित प्रदेशो के लिए परिव्यय 58,591 95 करोड रुपये किया गया। केन्द्र शासित प्रदेशो और राज्यो का हिस्सा सशोधित व्ययो मे 41 91 प्रतिशत रखा गया।

वर्ष 1998–99 के लिए सार्वजनिक क्षेत्र का परिव्यय 1,05,187 16 करोड रुपये निर्धारित किया गया। हमारे विकास की दर 6 8 प्रतिशत रही। वर्ष 1999–2000 के पहले सात महीनो मे सात प्रतिशत की उत्पादन वृद्धि, निर्यात मे 10 से 12 प्रतिशत की आशाजनक वृद्धि दर्ज की गई तथा मुद्रास्फीति भी 3 प्रतिशत से नीचे के स्तर पर बनी रही। सूचना प्रौद्योगिकी, आटोमोबाइल, टेलीकम्युनिकेशन, सीमेन्ट और इस्पात उद्योगो मे काफी विकास हुआ तथा विकास दर का 5 9 प्रतिशत रहने का अनुमान है। नये वर्ष के

बजट मे रक्षा पर व्यय मे बिशेष वृद्धि हुई है। इसके साथ ही बजट घाटा 6 प्रतिशत तक जा सकता है। राज्यो की वित्तीय स्थिति खराब होने से यहा 10 प्रतिशत तक की वृद्धि भी हो सकती है।

प्रति व्यक्ति आय पिछले सात वर्षो मे लगभग दोगुनी हो गई है – वर्ष 1993–94 मे जो रु 7698 वार्षिक थी वह 1998–99 मे रु 14,682 वार्षिक हो गई। जबकि महगाई की दर इस अवधि मे 10 8 प्रतिशत से घटकर 2 9 प्रतिशत रह गई है। यह सब हमारी प्रगति का ही द्योतक है।

उपभोक्ता शिक्षा

डॉ.रमाकर रायजादा,
क्षेत्रीय शिक्षा संस्थान, भोपाल

सभी व्यावसायिक प्रतिष्ठान तथा बैक, बीमा, रेलवे आदि सगठन अपने उत्पाद और सेवाए उपभोक्ताओ को बेचकर लाभ कमाते हैं। वे हमेशा उपभोक्ता की रूचि व पसद के अनुरूप माल को बनाकर प्रस्तुत करने मे प्रयासरत रहते है तथा अपनी सेवाओ से उपभोक्ताओ को खुश करते है। इन सभी व्यावसायिक प्रतिष्ठानो का अस्तित्व और प्रगति उपभोक्ताओ पर ही निर्भर करती है। आज के प्रतिस्पर्द्धात्मक व्यावसायिक जगत मे उपभोक्ता को यदि बेताज बादशाह कहा जाये तो अतिशयोक्ति नहीं होगी। सभी व्यावसायिक उत्पादन और क्रियाए उपभोक्ता की रूचि और इच्छाओ पर ही केन्द्रित है। व्यावसायिक योजनाए भी उपभोक्ता को ध्यान मे रखकर बनाई जाती हे तथा व्यवसाय का एकमात्र उद्देश्य उपभोक्ता की सतुष्टि करना होता है। इसलिए कुशल व्यवसायी कहते है।–

"हम व्यवसाय के मालिक नही हैं, हमारा स्वामी तो उपभोक्ता है, जो उपभोक्ता चाहता है हम वही करते हे।'

उपर्युक्त कथन सैद्धान्तिक रूप मे बहुत अच्छा और सत्य लगता है, किन्तु व्यावहारिकता मे पूजीवादी ओर प्रतिस्पर्द्धी अर्थव्यवस्थाओ मे आर्थिक क्रियाए उपभोक्ताओ को ध्यान मे रखकर नही की जाती। समाजवादी अर्थव्यवस्था मे तो कुछ आशा ही नही की जा सकती है। भारत जैसे देश की अर्थव्यवस्था मे,जहा हमेशा आवश्यक वस्तुओ की कमी ही रहती है, कैसे मान लिया जाए कि आर्थिक क्रियाए तथा वस्तुओ ओर सेवाओ का उत्पादन उपभोक्ता को ध्यान मे रखकर किया गया है। यदि एसा होता तो किसी वस्तु की कमी कमी कभी महसूस ही नही होती। वास्तविकता तो यहा तक हो गई है कि विक्रेता और उत्पादक की बाजार मे शासन (Dominate) करते है तथा उपभोक्ता उनकी दया पर निर्भर करता है। वे जब चाहे कीमत बढा देते है वस्तुओ को बाजार से गायब कर देते है। 1998 के मध्य एव उत्तरार्द्ध मे आलू, प्याज, नमक आदि की कीमतो मे काफी उछाल आया था। यदि सरकार ने प्रभावी नियत्रण न किया होता तो एक मध्यम वर्गीय परिवार के लिए प्याज भी दुर्लभ वस्तु हो गई होती। गरीब उपभोक्ता तो इसकी कल्पना ही नहीं कर सकता था। इसी स्थिति का कारण है कि विक्रेता सुसगठित जाग्रत, बुद्धिमान और साधन सम्पन है तथा उनके सामने उपभोक्ता असगठित, बाजार की क्रियाओ से बेखबर, साधनहीन आर कमजोर है। हमारे देश मे निर्धनता, पिछडापन और अशिक्षा ने इस समस्या को और अधिक विकराल बना दिया हे। इसके साथ ही उपभोक्ता रूढिवादी है, उनमे जाग्रति का अभाव भी पाया जाता है। वे विज्ञापन की तडक–भडक से प्रभावित होकर उत्पादको के सम्मुख झुक रहे है तथा कभी–कभी उन वस्तुओ को भी खरीद लेते हे जिनकी वास्तव मे उन्हे आवश्यकता ही नही है।

इस असतुलित स्थिति ने ही उपभोक्ता शिक्षा (Consumer Education) ओर उपभोक्ता सरक्षण (Consumer Protection) जेसी अवधारणाओ को जन्म दिया हे और स्थिति अधिक बिगडने पर कभी–कभी उपभोक्ता आन्दोलन (Consumer Movement) की भी आवश्यकता महसूस होने लगी हे।

उपभोक्ता का अर्थ - साधारण बोलचाल की भाषा मे उपभोक्ता का अभिप्राय उस व्यक्ति या व्यक्तियो के समूह से माना जाता है जो कि विभिन्न उद्योगो व उत्पादको द्वारा उत्पादित वस्तुओ व सेवाओ का उपयोग अपनी आवश्यकताओ की सतुष्टि के लिए करते है। इस प्रकार, मानवीय आवश्यकताओ की सतुष्टि के लिए अर्थव्यवस्था मे उत्पादित वस्तुओ व सेवाओ का उपयोग करने वाले व्यक्ति या व्यक्तियो के समूह को उपभोक्ता कहते हे।

परिभाषा - 'उपभोक्ता से अभिप्राय ऐसे व्यक्ति से है जो प्रतिफल के बदले मे किसी वस्तु या सेवा का क्रय करता है और उसे अपनी आवश्यकताओ की सन्तुष्टि के लिए प्रयोग करता है।

उपभोक्ता सरक्षण अधिनियम, धारा 2 (1) डी

इस प्रकार, यदि कोई व्यक्ति व्यावसायिक उद्देश्य या विक्रय के प्रयोजन से वस्तु को क्रय करता हे, तो उसे उपभोक्ता की श्रेणी मे शामिल नही किया जाएगा।

उपभोक्ता की प्रभुता

सभी आर्थिक क्रिया-कलापों का उद्देश्य आवश्यकताओ की सन्तुष्टि होती है, जो मानव को वस्तुओ व सेवाओ के उपभोग से प्राप्त होती है। इस प्रकार, सभी मानवीय आर्थिक क्रियाओ का अंतिम उद्देश्य (Ultimate aim) उपभोग है। इस कारण उपभोक्ताओ का आर्थिक प्रणाली मे एक महत्वपूर्ण स्थान होता है क्योंकि उसे ही अपने द्वारा क्रय की जाने वाली वस्तुओ व सेवाओ की किस्म को निश्चित करना है। किन्तु, मनुष्य की आवश्यकताए अनन्त होती है और उनकी पूर्ति के साधन सीमित होते है इसलिए उपभोक्ता को सदा ही चुनाव की समस्या रहती है।

पूजीवादी अर्थव्यवस्था में उत्पादक उन्ही वस्तुओं को बनाएगे जो उपभोक्ताओ को पसन्द है चाहे वे वस्तुए अच्छी हो या बुरी, अनिवार्य हो या आवश्यक, लाभदायक हो या हानिकारक। उत्पादक, उपभोक्ताओ की रुचि की उपेक्षा नही कर सकते, और यदि करते है तो उनकी वस्तुओ का विक्रय नही हो सकेगा और उन्हे हानि उठानी पड़ेगी। इस प्रकार हम कह सकते है कि उत्पादक और उद्यमकर्ता उपभोक्ताओ के नौकरो की भाति होते है जो उपभोक्ताओ के चुनाव, पसन्द या रुचि रूपी आदेशो के अनुरूप कार्य करते है। इसीलिए, उपभोक्ता को पूजीवादी अर्थव्यवस्था मे 'बेताज बादशाह' कहा जाता है। वह जिधर चाहे अर्थव्यवस्था को मोड दे। समूची अर्थव्यवस्था उसी की रुचि के अनुसार सचालित होती है।

उपभोक्ता के प्रभुत्व पर नियन्त्रण

प्राचीन काल मे उपभोक्ता अर्थव्यवस्था मे शक्तिशाली सम्राट था। उत्पादन छोटे पैमाने पर होता था और अधिकाश वस्तुए वह प्रत्यक्ष आदेश देकर बनवाता था, किन्तु आजकल उत्पादक बडे पैमाने पर भविष्य की माग का अनुमान स्वय लगाकर उत्पादन करते है। इससे उपभोक्ताओ की शक्ति में कोई बुनियादी परिवर्तन तो नही होना चाहिए। यदि उपभोक्ताओ की अभिरुचि से सम्बंधित उत्पादको के अनुमान सही निकले तो उत्पादको को अधिक लाभ होता है अन्यथा लाभ कम, या हानि भी हो सकती है। फिर भी, इससे उपभोक्ता की निरकुशता पर कछ नियन्त्रण लग ही जाता है।

आधुनिक युग मे परिस्थितिया बहुत कुछ बदल गई है जिससे उपभोक्ता की शक्तियो पर नियन्त्रण हो गया है। वह एक निरकुश सम्राट नही रहकर एक सीमित सम्राट बन गया है। उसके प्रभुत्व को निम्नाकित तत्व सीमित कर देते है

1 उपभोक्ता की आय उपभोक्ता अपनी आय के अनुसार ही वस्तुए व सेवाए बाजार से क्रय कर सकता है। यदि उसकी आय अधिक है तो अर्थव्यवस्था मे उत्पादन को अधिक सीमा तक प्रभावित कर सकता है, किन्तु यदि आय कम है तो उसका प्रभाव सीमित हो जाता है।
2 उपभोक्ता की जानकारी बाजार मे कई प्रकार की वस्तुएं उपलब्ध रहती है, किन्तु उनकी समुचित जानकारी के अभाव मे उपभोक्ता यह निश्चित नही कर पाता कि किस वस्तु से उसे सर्वाधिक सन्तुष्टि मिल सकती है। कभी-कभी वह कम उपयोगी वस्तुए भी खरीद लेता है। वह कीमत को वस्तु की गुणवत्ता का आधार समझ बैठता है जबकि स्थिति इसके विपरीत होती है।
3 उपभोक्ता की आदते व सामाजिक प्रथाए व्यक्ति कभी-कभी अपनी रुचियो के विपरीत भी सामाजिक प्रथाओ, रीति रिवाजो एव आदतो के कारण अपनी पसद की वस्तुओ का क्रय नही कर पाता। यथा, व्यक्ति को मालूम है कि सिगरेट पीना उसके स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है, फिर भी वह अपनी आदत के वशीभूत होकर सिगरेट का सेवन करता ही है।
4 वस्तुओ की बिक्री के ढग उत्पादक बिक्री को बढाने के लिए अनेक प्रकार से उपभोक्ताओ को आकर्षित करने का प्रयास करते है। वे टी वी, रेडियो, सिनेमा, अखबार, आदि मे विज्ञापन, सुन्दर और आकर्षक पैकिग, किस्तो मे भुगतान, 'उधार-बिक्री, इत्यादि की सुबिधा प्रदान करते है। उपभोक्ता इस सब चीजो से आकर्षित हो जाते है और इनसे उनकी चुनाव शक्ति सीमित हो जाती है।
5 मशीनीकरण का प्रभाव आजकल अधिकाशत बडे पैमाने पर मशीनो की सहायता से उत्पादन किया जाता है। इससे केवल प्रमापित और एक ही प्रकार की वस्तुओ का उत्पादन होता है। उपभोक्ता की व्यक्तिगत रुचियों का कोई ध्यान नही रखा जाता है और उपभोक्ता को उन्ही वस्तुओं का क्रय करना होता है जो कि बाजार मे उपलब्ध होती है। इस प्रकार उनकी प्रभुता मे कमी आ जाती है।

6 <u>तकनीकी ज्ञान की कमी</u> उपभोक्ता की रुचि की वस्तुओ का उत्पादन करने के लिए कभी-कभी तकनीकी ज्ञान की आवश्यकता होती है और वह तकनीकी ज्ञान उत्पादको के पास उपलब्ध नही होता। ऐसी स्थिति मे उन्हे उत्पादको के पास उपलब्ध तकनीकी ज्ञान के आधार पर उत्पादित वस्तुओ पर ही काम चलाना होता है और उनकी चुनाव शक्ति सीमित हो जाती है।

7 <u>वातावरण और दिखावटी उपभोग</u> उपभोक्ता दूसरे उपभोक्ताओ की होड़ मे या समाज मे प्रचलित प्रथाओ के कारण कभी-कभी ऐसी वस्तुओ का भी प्रयोग करते है जिनकी उन्हें आवश्यकता नही होती। उत्पादकगण इस कमजोरी का लाभ उठाकर दिखावट की वस्तुओ की कीमत ऊची कर देते है। इससे उपभोक्ताओ की चुनाव की स्वतत्रता सीमित हो जाती है।

8 <u>उत्पादको द्वारा एकाधिकार का निर्माण</u> कभी-कभी कुछ वस्तुओ के उत्पादन मे कई बडे उत्पादक मिलकर एकाधिकार जैसी स्थिति बना लेते है जिससे किसी वस्तु की पूर्ति किसी एक फर्म के हाथ मे केन्द्रित हो जाती है। फिर, वे जिस मूल्य मे और जिस किस्म की वस्तु बेचना चाहे बेचते है। इससे उपभोक्ताओ की चुनाव शक्ति पर नियन्त्रण होता है।

9 <u>उपभोग पर सरकारी नियन्त्रण</u> आजकल सभी राष्ट्रो मे कल्याणकारी सरकारे है जो वस्तुओ के उपभोग पर भाति-भाति के नियन्त्रण लगाती है (यथा- मद्य निषेध)। कुछ वस्तुओ के प्रयोग को कर लगाकर हतोत्साहित करती है तथा कुछ वस्तुओ के उत्पादन और उपभोग को प्रोत्साहित करने के लिए उन्हे आर्थिक सहायता प्रदान करती है। इससे भी उपभोक्ता की प्रभुता कम हो जाती है।

इस प्रकार, आजकल की परिस्थितियो मे उपभोक्ता उतना स्वतन्त्र और प्रभावशाली नही है जितना कि वह प्राचीन काल मे था। साथ ही, अवसर पाने पर उत्पादक और विक्रेता भी उसकी लापरवाही और अज्ञानता का लाभ उठाकर उसका शोषण करने से नही चूकते। इसलिए यह आवश्यक हो गया है कि उपभोक्ता को अपने अधिकारो का पूर्ण ज्ञान हो और उनके लिए वह जाग्रत रहे।

<u>उपभोक्ताओ के अधिकार</u>

उपभोक्ताओ मे जागरूकता के अभाव के कारण ही उनकी प्रभुसत्ता पर विपरीत प्रभाव पडा है। इसलिए यह आवश्यक हो गया है कि उपभोक्ताओ को अपने अधिकारो की जानकारी हो। उपभोक्ता शिक्षा का प्राथमिक उद्देश्य सरकार और व्यवसायियो से उपभोक्ताओ के अधिकारो की रक्षा करना है। यदि उपभोक्ताओ को अपने अधिकारो की जानकारी हो जाय तो उपभोक्ता शिक्षा को सफल कहा जायगा।

अमेरिकन राष्टपति जॉन कैनेडी ने उपभोक्ताओ के चार मौलिक अधिकार बताए- सुरक्षा का अधिकार, सूचना पाने का अधिकार, चुनने का अधिकार और सुने जाने का अधिकार। इन्हे मानवीय अधिकारो मे शामिल कर लिया गया। बाद मे, इनमे तीन और अधिकारो को शामिल किया गया- उपभोक्ता शिक्षा का अधिकार, स्वस्थ्य वातावरण का अधिकार और क्षतिपूर्ति का अधिकार।

इन अधिकारो का सक्षिप्त विवरण निम्न प्रकार है-

1 <u>सुरक्षा का अधिकार</u> इस अधिकार का सम्बन्ध स्वास्थ्य के लिए हानिकारक, दोषपूर्ण और असुरक्षित वस्तुओ से उपभोक्ताओ की सुरक्षा करना है। उत्पादको को उत्पाद की गुणवत्ता, विश्वसनीयता और कार्यप्रणाली के आधार पर आश्वासन देना होगा कि वह वस्तु उपभोक्ताओ के जीवन, सम्पत्ति और स्वास्थ्य पर कोई हानिकारक प्रभाव नही डालेगी। इसीलिए सिगरेट के प्रत्येक पैकेट पर लिखा होता है कि सिगरेट पीना स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है।

2 <u>सूचना पाने का अधिकार</u> बाजार मे विक्रय के लिए प्रस्तुत किये गये प्रत्येक उत्पाद के बारे मे पूरी जानकारी प्राप्त करने का उपभोक्ताओ को अधिकार है। उत्पादको एव विक्रेताओ की यह जिम्मेदारी है कि वह उस वस्तु के प्रयोग से लाभ, प्रयोग की विधि, सावधानिया, मूल्य, गुणवत्ता आदि से सम्बन्धित सम्पूर्ण जानकारी सभावित ग्राहको और उपभोक्ताओ को सुलभ कराये। इसी कारण आपने देखा होगा कि नये उत्पाद के बारे में छपे हुए पर्चे बाटे जाते है।

3 <u>उत्पाद को चुनने का अधिकार</u> उपभोक्ताओ को अधिकार है कि वह विभिन्न उत्पादों मे से एक उत्पाद और एक उत्पाद की विभिन्न किस्मो मे से कोई एक अपनी रुचि के अनुसार चुन ले। कभी-कभी उत्पादक या विक्रेता वस्तु की कमी दिखाकर उपभोक्ताओ को इस अधिकार से वंचित कर देते है।

4 <u>सुने जाने का अधिकार</u> उपभोक्ताओ को अधिकार है कि वह वस्तु की गुणवत्ता, मूल्य, वजन, तादाद, आदि के बारे मे अपने विचार रख सके। यदि उसे कोई शिकायत हो तो उसे निश्चित प्रक्रिया द्वारा हल किया जा सके तथा उसकी सुनवाई हो। इसके लिए सरकारी हस्तक्षेप और वैधानिक प्रक्रिया का निर्माण आवश्यक होता है।

5 <u>दुरुस्ती, प्रतिस्थापन या क्षतिपूर्ति का अधिकार</u> सरकार द्वारा केवल शिकायत को पजीकृत करना या यह घोषित कर देना कि उत्पादक या विक्रेता ने उपभोक्ता के अधिकारो की अवहेलना की है, पर्याप्त नही होगा, और उपभोक्ता के प्रति अन्याय होगा जब तक उसे हानि के लिए उचित क्षतिपूर्ति न प्रदान की जाये। उस वस्तु को मरम्मत करके दुरुस्त किया जा सकता है, बदला जा सकता है या फिर ग्राहक को नकद मे क्षतिपूर्ति दी जा सकती है। जब कोई वाद प्रस्तुत किया जाता है तो वह उत्पादक या विक्रेता और उपभोक्ता के बीच समझौते के आधार पर ही हल होना चाहिए।

6 <u>स्वस्थ वातावरण का अधिकार</u> केवल यह ही आवश्यक नही है कि उत्पाद से उपभोक्ता को कोई शारीरिक हानि न हो वल्कि उत्पाद व उसके कारखानो से वातावरण का प्रदूषण भी नही होना चाहिए। सामाजिक जीवन को सुरक्षित बनाना व उसमे उत्थान करना भी उत्पादको का कर्तव्य है। इस प्रकार, स्वस्थ वातावरण को बनाए रखना आवश्यक है।

7 <u>उपभोक्ता शिक्षा का अधिकार</u> जब तक उपभोक्ताओ को अपने अधिकारो और उनकी रक्षा के लिए निदानात्मक कार्यवाही की प्रणाली की जानकारी नही होगी, वे उत्पादको एव विक्रेताओ से नही बच पायेगे। उपभोक्ताओ को इसके लिए सगठित भी होना पड सकता है। अत स्वैच्छिक संस्थानो, शिक्षा सस्थाओ और सरकार को उपभोक्ता शिक्षा का उचित प्रबन्ध करना चाहिए।

आजकल उत्पादको या निर्माताओ व विक्रेताओ की मनमानी व उपभोक्ताओ के बढते शोषण के कारण यह आवश्यक हो गया है कि उपभोक्ता शिक्षा का प्रबन्ध हो। उपभोक्ता सगठित हो । उपभोक्तावाद, उपभोक्ता शिक्षा और उपभोक्ता आन्दोलन जैसी अवधारणाओ का विकास इसीलिए किया गया है।

<u>उपभोक्ता फोरम, उपभोक्ता मन्च, उपभोक्तावाद, उपभोक्ता शिक्षा, उपभोक्ता आन्दोलन, उपभोक्ता सरक्षण एव उपभोक्ता सरक्षा</u>

इन सभी अवधारणाओ का प्रादुर्भाव बीसवी सदी मे ही हुआ है। प्राचीन काल मे तो उपभोक्ताओ को उनकी रुचि, फैशन और इच्छाओ के अनुरूप वस्तु का उत्पादन करके उपलब्ध कराया जाता था। सर्वप्रथम, 1900 ई मे अमेरिका मे औषधिकाण्ड (Drug Scandal) और मूल्यवृद्धि के विरोध मे उपभोक्ताओ ने आन्दोलन किया था। इसके बाद, 1930 मे इसे पुन दोहराया गया। इन्ही चीजो के खिलाफ 1960 मे भी आन्दोलन हुआ। तब तक उपभोक्ताओ के सगठन बन चुके थे और उनके स्पष्ट उद्देश्य भी थे। अमेरिकी उपभोक्ता उद्योगपतियो से अप्रसन्न थे, क्योंकि वे गलत तरीको का प्रयोग करके उनका शोषण करते थे। 1962 मे, अमेरिकी राष्ट्रपति जॉन केनैडी ने उपभोक्ताओ के चार अधिकार बताकर अमेरिका और पूरे ससार मे उपभोक्तावाद के दरवाजे खोल दिये। इसके परिणामस्वरूप अमेरिकी कांग्रेस ने उपभोक्ता सरक्षण अधिनियम लागू कर दिया। अमेरिका की इन घटनाओ से सारे ससार के उपभोक्ताओ मे जागरण हो गया और उनकी गतिविधियो को उपभोक्ता शिक्षा, उपभोक्ता आन्दोलन, उपभोक्तावाद, उपभोक्ता सरक्षा या उपभोक्ता सरक्षण का नाम दिया गया।

<u>परिभाषाए</u>

'उपभोक्ता आन्दोलन एक सामाजिक चेतना है, जिसका प्रादुर्भाव उपभोक्ताओ को उनके अधिकारो के लिए जागरूक करने की शिक्षा देने के लिए हुआ।' [1]

'उपभोक्ता जागृति एक सामाजिक चेतना है जो विक्रेताओ के सम्बन्ध मे क्रेताओ के अधिकारो और शक्तियो मे वृद्धि करने के लिए होती है।' [2] —फिलिप कोल्टर

'सक्षेप मे, उपभोक्ता आन्दोलन उपभोक्ताओ के हितों की रक्षा व भलाई के लिए उपभोक्ताओ द्वारा उपभोक्ताओ के लिए की गई एक चेष्टा है।' [3]

'उपभोक्ता आन्दोलन उपभोक्ताओ का सगठित प्रयास है जो जीवनस्तर से असन्तुष्टि का निदान करने, दूर करने या पुर्नदशा के लिए किये जाते है।'[1]. —बसर्किक एवं रोथे

'उपभोक्तावाद सामाजिक परिवेश मे उपभोक्ताओ की सहायता और संरक्षा हेतु एक शक्ति है, जिसका निर्माण व्यवसाय पर नैतिक, आर्थिक एव वैधानिक दबाव डालना होता है।'[2]

—क्रेवेन्स एवं हॉल्स

'उपभोक्ता आन्दोलन, निजी सगठनो और जनता की उन समर्पणात्मक क्रियाओं का समूह है जिन्हे व्यक्तियों को उपभोक्ता के रूप मे प्राप्त अधिकारों का हनन होने पर किया जाता है।'[3]

-हॉरपर, वॉयड एव एलिन

'उपभोक्ता वर्ग को उनके अधिकारो व कर्तव्यों से अवगत कराना ही उपभोक्ता शिक्षा है।'

उपभोक्तावाद, उपभोक्ता शिक्षा या उपभोक्ता आन्दोलन की उक्त सभी परिभाषाए स्पष्ट करती है कि यह उपभोक्ताओ की एक सामूहिक गतिविधि है, जो उनके हितो या अधिकारो की रक्षा करने के लिए की जाती है। इसका सम्बन्ध ग्राहक (Customer), उपभोक्ता (Cusumer), या मोवक्किल (Client) से होता है। इन तीनो का ही सम्बन्ध उत्पाद या सेवा को प्रयोग करने वाले समूह से है। आधुनिक युग मे इसकी बहुत आवश्यकता है।

<u>विशेषताए</u>

1 यह उपभोक्ताओ का स्वैच्छिक सगठन है।
2 यह उपभोक्ताओ के अधिकारो की रक्षा के लिए बनाया जाता है।
3 यह 'एकता मे शक्ति' की विचारधारा पर ही कार्य करता है।
4 इन्हे सभी वस्तुओ और सेवाओ के लिए समान रूप से लागू किया जा सकता है।
5 यह विक्रेताओ और उत्पादको की अनैतिक क्रियाओ को रोकने के लिए बनाया गया संगठन है।
6 यह उपभोक्ताओ मे एकता स्थापित करने का कार्य करती है।
7 यह प्रजातान्त्रिक सिद्धान्तो पर कार्य करती है।

<u>आवश्यकता एव महत्व</u>

1 <u>असुरक्षित उत्पादो से रक्षा</u> उपभोक्ता आन्दोलन या उपभोक्ता शिक्षा के माध्यम से उपभोक्ताओं का सगठन उत्पादको को स्वास्थ्य के लिए खतरनाक और असुरक्षित वस्तुओ के उत्पादन और विक्रय पर सरकार के माध्यम से प्रतिबन्ध लगवा सकता है।
2 <u>पर्यावरण सरक्षण के लिए</u> फैक्ट्रियो से निकलने वाला धुआ, अवशेष या गदा अम्लीय जल वातावरण को दूषित करता है। एक व्यक्ति उत्पादको को ऐसा करने से रोकने की सामर्थ्य नही रखता किन्तु एक सगठन प्रदूषण मुक्ति और स्वास्थ्यप्रद वातावरण बनाने हेतु विवश कर सकता है।
3 <u>अनिवार्य वस्तुओ की निर्बाध पूर्ति के लिए</u> उपभोक्ताओं को जीवन की अनिवार्य आवश्यकताओं को किसी भी कीमत पर खरीदना ही पडता है। इस कमजोरी का लाभ उठाकर उत्पादक और विक्रेता कभी भी उनके दाम बढा देते है। इस शोषण से बचने के लिए उपभोक्ताओं का सगठित होना आवश्यक है।
4 <u>विक्रय पश्चात सेवा के लिए</u> एक बार माल को बेच देने के बाद उपभोक्ताओं को विक्रय पश्चात सेवा (After-sale service) देने मे उत्पादक एव विक्रेता व्यय नही करना चाहते और उत्पाद मे कोई दोष होने पर भी वे टालते ही रहते है। कारण, उन्हे माल का मूल्य तो मिल ही चुका होता है। इसलिए उपभोक्ताओ का सगठित होना आवश्यक हैं।
5 <u>उपभोक्ता शिक्षा के लिए</u> वस्तु के प्रयोग मे सावधानिया और उससे सम्बंधित अन्य जानकारी उपभोक्ताओ को उपलब्ध कराने मे उत्पादक रुचि नही लेते। उनसे यह जानकारी उपलब्ध कराने के लिए उपभोक्ताओ का सगठित होना अनिवार्य है। इसी व्यवस्था के अधीन प्रत्येक वस्तु के पेक पर अधिकतम खुदरा मूल्य, प्रयोग मे सावधानिया, अदि को प्रदर्शित किया जाता है।

4 उपभोक्ताओं मे अशिक्षा, लापरवाही, अज्ञानता और रूढिवादिता पाई जाती है जिसका भरपूर लाभ विक्रेता व निर्माता उठाते है।

5 भारत मे न्यायालय की प्रक्रियाए अत्यन्त जटिल व पेचीदा है और न्यायालय के माध्यम से न्याय पाने मे काफी समय लग जाता है, जिससे उपभोक्ताओ को अपने शोषण की शिकायत करने की भी हिम्मत नही होती। शिकायतो मे क्षतिपूर्ति के प्रकरण तो और भी अधिक समय लेते है।

6 सरकार ने उपभोक्ताओं के सरक्षणार्थ अनेक नियम और कानून बनाए है किन्तु उन्हे सरकारी तन्त्र द्वारा प्रभावशाली ढग से लागू नही किया जाता।

7 सार्वजनिक उपक्रमो की उपभोक्ता-अधिकारो और हितो के प्रति उदासीनता ने उपभोक्ता सगठनो और सरकारी हस्तक्षेप की आवश्यकता को और अधिक बढा दिया है।

भारत मे उपभोक्ता आन्दोलनो का इतिहास

भारत मे उपभोक्ता अधिक जागरुक नही रहे है जिससे उपभोक्ता आन्दोलनो का इतिहास यहा पर अधिक पुराना नही है। उपभोक्ताओ की जाग्रति की आवश्यकता 1958 मे महसूस की गई, किन्तु वास्तविक शुरुआत 1966 मे हो पाई। इसके इतिहास को निम्न क्रम मे प्रस्तुत किया जा सकता है -

1 1958 मे, भारतीय मानक सस्थान (Indian Standards Institute - ISI) के दिल्ली अधिवेशन मे एक विशेष प्रस्ताव पारित करके उपभोक्ता परिषद के गठन की सिफारिश की गई थी, जिसकी स्थापना 1959 मे हुई, किन्तु परिषद ने कोई विशेष उल्लेखनीय कार्य नही किया।

2 1966 मे, उपभोक्ताओ की आवश्यक वस्तुओ की बढती कीमतो से रक्षा करने के लिए भारतीय उपभोक्ता सलाहकार समिति (Consumer Guidance Society) की स्थापना मुम्बई मे की गई। उसी वर्ष, जे आर डी टाटा जैसे प्रतिष्ठित व्यवसायियो की पहल पर 'काउसिल फार फेयर बिजनेस प्रेक्टिसेस' की भी स्थापना हुई।

3 1971 मे, भारतीय उपभोक्ता सघ की स्थापना की गई। उपभोक्ताओ को कानूनी सलाह देना, उपभोक्ता शिक्षा के लिए व्याख्यान और गोष्ठिया (Seminars) आयोजित करना, आदि सघ की गतिविधियो मे शामिल किया गया।

4 1978 मे, उपभोक्ता हितो के सरक्षण के लिए उपभोक्ता शिक्षा एव अनुसधान केन्द्र की स्थापना अहमदाबाद मे की गई।

5 ग्राहक पचायत, सरकारी कर्मचारी उपभोक्ता भडार, जैसी उपभोक्ता सहकारी समितियो की स्थापना की गई जो सीधे उत्पादको से माल क्रय करके उचित दामो पर अपने सदस्य उपभोक्ताओं को बेचती है।

6 शहरी क्षेत्रो मे सहकारी बाजारो की स्थापना की गई जिनका उपभोक्ता हितो की रक्षा मे महत्वपूर्ण योगदान रहा है।

7 समाचार पत्रो मे सभी वस्तुओ के मूल्य नियमित रूप से प्रकाशित किये जाते हैं जिनसे भी उपभोक्ताओ मे जागरूकता लाने मे बहुत सहायता मिलती है।

इस प्रकार, भारतवर्ष मे उपभोक्ता आन्दोलन की गति बहुत धीमी रही, तथा इनका विकास शहरी क्षेत्रो तक ही सीमित रहा। ग्रामीण क्षेत्रो मे इनकी कोई गतिविधि ही नही देखी गई। इसका प्रमुख कारण उपभोक्ताओ मे अशिक्षा, गरीबी और लापरवाही रहा है।

इन परिस्थितियो के कारण अत्यन्त आवश्यक होते हुए भी उपभोक्तावाद, उपभोक्ता सघ और उपभोक्ता आन्दोलनो का विकास नही हो पाया। कभी-कभी उपभोक्ता वस्तुओ की मूल्यवृद्धि या अभाव हो जाने पर कुछ प्रदर्शन हो जाते है, जैसे कि 1998 के उत्तरार्द्ध मे प्याज की कमी होने पर देश की राजधानी, आदि मे हुए। किन्तु अधिकतर ऐसे प्रदर्शन राजनैतिक पर्टियो द्वारा अपने राजनैतिक लाभ के लिए ही किये जाते रहे है। अभी हाल मे, बहुत से उपभोक्ता सगठन बनाये गये किन्तु उनमे से कुछ ने ही अपनी शक्ति एव व्यवहारिक उपयोगिता का प्रदर्शन किया तथा वह भी मुख्यत शहरी क्षेत्रो तक ही सीमित रहा। जबकि देश की अधिकाश जनता गावो मे निवास करती है जो खुले आम व्यापारियो के शोषण का शिकार होती रहती है, उसके अशिक्षित होने से यह समस्या और अधिक बढ जाती है। सरकार को उपभोक्ताओ के हितो की रक्षा करनी चाहिए, किन्तु सभी पार्टियो के शासन काल मे इसकी केवल आंशिक पूर्ति ही हो सकी है। यदि सभी पक्ष (व्यापारी, उपभोक्ता

6 एकाधिकार एव प्रतिबंधित व्यापार प्रणाली से बचाने के लिए प्रत्येक व्यवसायी अधिकतम लाभ कमाना चाहता है और इसके लिए बाजार पर एकछत्र राज्य एव अनेक प्रकार के गलत तरीके, यथा-कालाबाजारी, वस्तु को बाजार से गायब कर देना, आदि अनुचित विधियो को अपनाता है। व्यापारियो के इन सभी अवैध शोषण से बचने के लिए या उनका सामना करने के लिए उपभोक्ताओ का भी एकजुट होना आवश्यक है। एकजुट होने पर व्यापारी ऐसा नही कर सकेगे।

7 उपभोक्ताओ की रुचि, फैशन, आदि मे परिवर्तन वैसे तो उत्पादको को उपभोक्ताओं की रुचि फैशन आदि मे होने वाले परिवर्तनो की जानकारी रखना चाहिए तथा उत्पादन उनकी आवश्यकताओ के अनुरूप ही करना चाहिए। किन्तु कभी-कभी यदि ऐसा न हो सके तो उपभोक्ताओं का सगठन उत्पादको को उनके उत्पाद मे परिवर्तन करने के लिए आगाह कर सकता है।

8 दोषपूर्ण वितरण प्रणाली से मुक्ति आजकल व्यापार-जगत मे देखा गया है कि विक्रेता तरह-तरह से उपभोक्ताओ से अधिक कीमत वसूल करके भी घटिया किस्म का माल, या तौल मे कमी करने का प्रयास करते है। उपभोक्ता मच या सगठन उत्पादको के साथ मिलकर थोक व फुटकर व्यापारियो को गलत व्यापारिक विधियो का प्रयोग करने से रोक सकते है। इससे उत्पादको की भी एक अच्छी छवि उपभोक्ताओ के बीच बनेगी।

9 जिम्मेदार सरकार उपभोक्ता जागृति से प्रभावित होकर सरकार भी उपभोक्ताओं के प्रति अपने कर्तव्यों को समझेगी तथा सभी आवश्यक वस्तुओ की निर्बाध पूर्ति सुनिश्चित करने का प्रयास करेगी। यदि उपभोक्ता जाग्रत होगे तो सरकार को उन व्यापारियो के विरुद्ध मजबूर होकर कार्यवाही करनी ही पड़ेगी जो अनुचित व्यापारिक नीतियो का प्रयोग करते है।

इस प्रकार, उपभोक्ता फोरम या उपभोक्ता मचो का उद्देश्य उपभोक्ता सरक्षण है। व्यापारिक जगत में प्रतिस्पर्द्धा का बना रहना अति आवश्यक है, तभी उपभोक्ताओ को कम मूल्य पर, अच्छी किस्म की वस्तुए और सेवाए उपलब्ध कराने के लिए उत्पादक नये-नये तरीके खोजने का प्रयास करते रहेगे।

उपभोक्ता सरक्षण के पक्षकार(Parties to Consumer's Protection)

व्यावसायिक जगत मे उपभोक्ताओ के हितो की रक्षा के लिए तीन वर्गो का सक्रिय होना आवश्यक होता है

1 उपभोक्ता सघ
2 व्यवसायिक सस्थान
3 सरकार

उपभोक्ताओ के हितो की रक्षा के लिए प्रभावशाली कदम सुनिश्चित करने के लिए उक्त तीनो ही पक्षो का व्यवहारिक एव सक्रिय सहयोग अनिवार्य है। उपभोक्ताओ को जाग्रत, शिक्षित और सगठित होना पडेगा, तभी वह उत्पादको और विक्रेताओ द्वारा की गई अनुचित व्यवसायिक क्रियाओ और शोषण से अपने आप को सुरक्षित कर पायेगे। व्यापारिक प्रतिष्ठानो को उपभोक्ता के अधिकारो को ध्यान मे रखकर कार्य करना चाहिए। उन्हे अपनी व्यवसायिक क्रियाओ मे नैतिक मूल्यो को बनाये रखते हुए स्वशासित ढग से कार्य करना चाहिए। सरकार को भी उपभोक्ता सरक्षण से सम्बन्धित नियम बनाने चाहिए तथा उन्हे सख्ती से लागू करना चाहिए।

भारत मे उपभोक्ता

भारत मे उपभोक्ता की स्थिति अत्यन्त दयनीय है। उपभोक्ता सघो की स्थापना और सरकारी हस्तक्षेप की अति आवश्यकता है। ऐसा करने से ही उपभोक्ता वर्ग के हितो की रक्षा की जा सकती है। यहा के उपभोक्ताओ के सम्मुख सामान्यत निम्न समस्याए आती है

1 अनेक बार बाजार मे सामान्य उपयोग की वस्तुओ की कमी हो जाती है, जिससे उनके मूल्य बढ जाते है। यह कमी अधिकाशत अनिवार्यताओ की श्रेणी मे आने वाली वस्तुओ की होती है। जमाखोरी, मुनाफाखोरी, भ्रष्टाचार की समस्याए भी उपभोक्ताओ को त्रस्त किये रहती है।

2. भारतवर्ष मे उत्पादको और विक्रेताओ के बीच स्वस्थ प्रतिस्पर्द्धा, बाजार मे अनेक स्थानापन्नो व वैकल्पिक उत्पादो की उपलब्धि एव उत्पादो के सम्बन्ध मे आवश्यक जानकारी का भी अभाव होता है, जिससे उपभोक्ताओ को अक्सर विक्रेताओ व उत्पादको के दुराचार का सामना करना पडता है।

3 उत्पादक, उपभोक्ताओ को उत्पाद की विशेषताओ, आदि के बारे मे पूर्ण जानकारी उपलब्ध नही कराते है जिससे वे दोषपूर्ण, क्षतिग्रस्त, पुरानी एव घटिया वस्तुए आसानी से उपभोक्ताओ को बेचकर लाभ कमा लेते है।

और सरकार) मिलकर कार्य करे तो इस दिशा मे बहुत कुछ किया जा सकता है। इसलिए, उपभोक्ता जागरण, उपभोक्ता मचो, उपभोक्ता आदोलनो, उपभोक्ता सघो या उपभोक्ता फोरम की देश मे अत्यन्त आवश्यकता है जो सरकार और व्यवसायी वर्ग के साथ समन्वित प्रयास करे जिससे क्रेता व विक्रेता के मध्य सतुलित रूप से विनिमय सचालित हो सके। इसमे व्यवसायिक प्रतिष्ठानो के स्वशासन के साथ-साथ विधान का निर्माण व उसे लागू करने मे सरकारी कडाई व हस्तक्षेप की अति आवश्यकता है।

उपभोक्ता सरक्षण अधिनियम, 1986

भारत के असहाय और अशिक्षित उपभोक्ताओ को व्यवसायियो की अनुचित व्यापारिक क्रियाओ से बचाने के लिए सरकारी कानून और वैधानिक सुरक्षा की अति आवश्यकता है। पूर्व मे, सरकार ने केवल व्यापार के प्रोत्साहन को ध्यान मे रखकर कानून बनाए और उपभोक्ताओ का शोषण भी हो सकता है, ऐसा कभी नही सोचा गया। उन कानूनो का उद्देश्य प्रतिस्पर्द्धी अन्तर्राष्ट्रीय बाजार से भारतीय उद्योगो को मात्र संरक्षण प्रदान करना था। यदा-कदा उपभोक्ताओ पर जो ध्यान दिया गया वह मात्र सयोग ही था। केवल 1945 मे, जब सम्पूर्ण विश्व मे उपभोक्ताओ को मुद्रास्फीति का सामना करना पडा उस समय सरकार को यह आवश्यकता महसूस हुई कि उपभोक्ताओ का व्यापारियो की अनुचित व्यवसायिक नीतियो (Unfair Trade Practices) से सरक्षण आवश्यक है और उसी समय विभिन्न देशों मे उपभोक्ता सरक्षण पर कानून बनाये गये।

हमारे देश मे उपभोक्ता अधिनियम (1986) लागू होने के पूर्व लगभग बीस नियम, उपनियम या अधिनियम थे जो किसी न किसी रूप में उपभोक्ताओ के हितों की रक्षा करते थे। उनमे से मुख्य निम्न है

1 <u>एकाधिकार और प्रतिबंधित व्यापार अधिनियम (Monopoly and Restrictive Trade Practices Act)</u> इसका उद्देश्य एकाधिकार एव अनुचित या प्रतिबंधित व्यवसाय प्रणालियो का नियन्त्रण करना है। उपभोक्ताओ के शोषण का प्रमुख अस्त्र, निजी एकाधिकार होता है, उसकी स्थापना न हो इसका प्रयास किया जाता है। इससे देश के आर्थिक साधन व शक्तिया चद हाथो मे केन्द्रित होना भी रुक जाता है।

2 <u>डिब्बाबद वस्तुए (व्यवस्था) नियम [The Packaged Commodities (Regulation) order],1975</u> इस अधिनियम के अन्तर्गत उत्पादको को पैकिट पर शुद्ध वजन, पैकिग की तिथि, अधिकतम खुदरा मूल्य, आदि सूचनाए अंकित करना आवश्यक होना है। इससे उपभोक्ताओ को वस्तु क्रय करने के लिए निर्णय लेने मे सहायता मिलती है।

3 <u>माप-तौल अधिनियम (Weight and Measures Act), 1958</u> इस अधिनियम का प्रमुख उद्देश्य देश मे समान माप व वजन के प्रमाप प्रस्तुत करना है। यह अधिनियम कम माप-तौल से भी उपभोक्ताओ को सुरक्षा प्रदान करता है। इसके अन्तर्गत निरीक्षको की नियुक्ति की जाती है जो अचानक दुकानो पर माप व बाटो की जाच करते है। इससे विक्रेता कम माप या तौल के आधार पर उपभोक्ताओ को धोखा नही दे पाते।

4 <u>आवश्यक वस्तु अधिनियम (Essential Commodities Act), 1955</u> यह अधिनियम देश मे आवश्यक वस्तुओ की निर्बाध पूर्ति की व्यवस्था करता है। इसके अन्तर्गत 71 वस्तुओ को सूचीबद्ध किया गया है, जिनकी पूर्ति सरकार उचित कीमत पर होना निश्चित करती है तथा उनकी जमाखोरी, कालाबाजारी और मुनाफाखोरी पर नियन्त्रण करती है।

5 <u>खाद्य वस्तु मिलावट प्रतिबन्धक अधिनियम (The Prevention of Food Adulteration Act), 1954</u> यह अधिनियम खाद्य पदार्थो मे होने वाली मिलावट को रोकता है। इसके अन्तर्गत उत्पादको को गुणवत्ता का एक निश्चित न्यूनतम स्तर बनाये रखना होता है। अन्यथा, रु 5,000 का जुर्माना या आजीवन कारावास या दोनो का प्रावधान है।

6 <u>आई एस आई और एगमार्क(ISI and Agmark)</u>. भारतीय मानक सस्थान ने गुणवत्ता का एक न्यूनतम स्तर निर्धारित किया है। यदि उत्पाद उस स्तर का है तो उस पर ISI मार्क दिया जाता है। इसी प्रकार, एगमार्क सील कृषि पदार्थो की गुणवत्ता मे उपयुक्त श्रेणी व अच्छी किस्म की गारटी देता है। यह दोनो ही मार्क उपभोक्ताओ को सुरक्षा प्रदान करते हे जिससे वे बिना अधिक बिचार किये केवल मार्का देखकर ही उपभोक्ता-वस्तुओ का क्रय कर सकते है।

इसके अतिरिक्त, उपभोक्ता सरक्षण के लिए कुछ व्यवस्थाए स्वेच्छा से व्यवसायियो द्वारा भी की जाती रही है, जैसे-

1 कुछ कम्पनियां उपभोक्ता शिकायत प्रकोष्ठ (Consumer Complaint Cell) की स्थापना करती है, जहा उपभोक्ता उत्पाद के बारे में अपनी शिकायत व विचार रख सकते है। यह व्यवसायिक दृष्टि से भी अच्छी प्रणाली है क्योंकि उत्पादक उपभोक्ताओ से लगातार सम्पर्क मे बने रहते है और उन्हे टिप्पणियां (Feedback) मिलती रहती है जिससे वे अपने उत्पाद की कमिया दूर करके उसे और उत्तम बना सकते है। इससे अन्तत उन्ही की बिक्री बढती है।

2 कुछ प्राइवेट और सरकारी सस्थाए स्थान-स्थान पर शिकायत पेटिकाए (Complaint Boxes), शिकायत पुस्तिका (Complaint Book), सुझाव पुस्तिका (Suggestion Book), आदि रख देती है, जहा उपभोक्ता अपनी शिकायत व सुझाव दे सकते है। जब उपभोक्ताओ को अपनी शिकायत या सुझाव पर की गई कार्यवाही का ज्ञान होता है तो उन्हे बहुत प्रसन्नता होती है।

24 दिसम्बर, 1986 से उपभोक्ता सरक्षण अधिनियम (1986), जम्मू कश्मीर को छोडकर सम्पूर्ण भारत मे लागू है। इसके अन्तर्गत सभी वस्तुओ और सेवाओ को लिया गया है तथा किसी वस्तु या सेवा के लिए अलग से अधिसूचना जारी करने की सरकार को आवश्यकता नही है। इस नियम के प्रावधान अन्य सभी पूर्व मे लागू किये गये अधिनियमो के प्रावधानो के अतिरिक्त समझे जावेगे। इस अधिनियम का उद्देश्य उपभोक्ताओ के हितो का श्रेष्ठतर सरक्षण करना है। अधिनियम लागू होने के पूर्व उपभोक्ताओं के विवादो का निपटारा दीवानी न्यायालयो मे होता था जहा पहले से ही प्रकरणो का अधिक भार रहता है तथा इन प्रकरणो की सुनवाई मे अधिक समय लग जाता था। इसलिए, उपभोक्ताओ के हितो की रक्षार्थ एक अलग अधिनियम और प्रक्रिया की आवश्यकता थी। इसी को दृष्टिगत रखते हुए इस अधिनियम को लागू किया गया।

इस अधिनियम के अन्तर्गत केन्द्र व राज्य स्तर पर उपभोक्ता सरक्षण परिषद (Consumer Protection Council) की स्थापना का प्रावधान है। यह परिषद उपभोक्ता के अधिकारों मे वृद्धि और उनके हितो की रक्षा के लिए कार्य करेगी। उपभोक्ताओ की शिकायतो के निवारणार्थ त्रिस्तरीय अर्द्ध-न्यायिक तन्त्र (Quasi-Judicial Machinery) की स्थापना की सिफारिश की गई, जो केन्द्र, राज्य और जिला स्तर पर कार्य करेगा। इनका सक्षिप्त विवरण निम्न प्रकार है-

अ केन्द्रीय उपभोक्ता सरक्षण परिषद

इस परिषद का गठन केन्द्र सरकार द्वारा किया जाता है।

<u>उद्देश्य</u> परिषद का प्रमुख उद्देश्य उपभोक्ता के हितो का प्रोत्साहन व रक्षा करना है। इसके उद्देश्यो को निम्न रूप मे लिखा जा सकता है-

1 उपभोक्ताओ के जीवन और सम्पत्ति के लिए खतरनाक वस्तुओ की बिक्री को रोकना।
2 उपभोक्ताओ को अनुचित व्यापार पद्धितियो से होने वाले शोषण से रोकने के लिए वस्तु के वजन, गुणवत्ता, शुद्धता, क्षमता, प्रमाप, आदि के बारे मे वस्तु के पैकिट पर स्पष्ट उल्लेख होने की व्यवस्था करना।
3 जहा भी सम्भव हो सके, वस्तु के स्थानापन्न या उसकी अनेक किस्मे उपलब्ध कराने की व्यवस्था करना।
4 उपभोक्ताओ के सुने जाने का अधिकार और उनके हितो की रक्षा के लिए उपयुक्त उपभोक्ता फोरम तथा उचित कार्यवाही सुनिश्चित करना।
5 अनुचित व्यापार पद्धतियो या किसी अन्य प्रकार से हुए उपभोक्ताओ के शोषण की क्षतिपूर्ति को सुनिश्चित करना।
6 उपभोक्ता शिक्षा की समुचित व्यवस्था करना।

केन्द्र सरकार की आर्थिक नीतियो के निर्माण मे भी यह परिषद महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है। आवश्यकता पडने पर परिषद उपभोक्ता सरक्षण के विभिन्न मुद्दो पर वाछित सूचना एव सलाह उपलब्ध कराती है। यद्यपि परिषद का योगदान एक सलाहकार के रूप मे होता है फिर भी उपभोक्ता संरक्षण से सम्बंधित सरकारी नीतियो के निर्माण मे परिषद की महत्वपूर्ण भूमिका रहती है।

शिकायत प्राप्त होने पर फोरम तीस दिन के अन्दर दूसरी पार्टी को आई शिकायत की एक प्रति भेजकर अपना पक्ष प्रस्तुत करने के लिए कहती है। इस अवधि को पन्द्रह दिन के लिए और बढाया जा सकता है। यदि दूसरा पक्ष आपत्ति करता है या आरोपो को मना करता है तब फोरम उपलब्ध साक्ष्यो के आधार पर मामलो को निपटाने का प्रयास करती है। यदि मामले को सुलझाने के लिए वस्तु के नमूने (Sample) की आवश्यकता होती है तो नमूने लिए जाते है तथा उन्हे विश्लेषणार्थ किसी भी प्रयोगशाला में भेजा जा सकता है। सन्दर्भ मिलने के पैतालीस दिन के अन्दर प्रयोगशाला को अपना प्रतिवेदन (Report) फोरम को भेजना अनिवार्य रहता है। इसके बाद, फोरम रिपोर्ट की एक प्रति अपनी टिप्पणी (Remarks) के साथ दूसरे पक्ष को भेजता है जिसे अपना पक्ष लिखित मे फोरम को प्रस्तुत करना होता है। इस पर फोरम दोनो पक्षों को शिकायत निवारण हेतु उपयुक्त अवसर व समय देता है। इस अधिनियम के अन्तर्गत उपभोक्ता विवाद के हल और फैसले से सम्बन्धित वही अधिकार प्राप्त है जो सिविल कोर्ट को होते है। फोरम दूसरे पक्ष को आदेश दे सकता है कि-

1 उपभोक्ता द्वारा बताये गये दोष को दूर करे,
2 वस्तु का बदली (Replacement) कर दे,
3 उपभोक्ता द्वारा अदा किये गये मूल्य को वापस कर दे,
4 उपभोक्ता को हुई आर्थिक हानि या शारीरिक कष्ट (Injury) की क्षतिपूर्ति करे।

जिला फोरम द्वारा दिये गये आदेश के लिए तीस दिन के भीतर राज्य उपभोक्ता आयोग मे अपील की जा सकती है।

राज्य उपभोक्ता आयोग (State Consumer Commission):

यह उपभोक्ता मामलो के निपटारे के लिए राज्य स्तर पर एक आयोग है जिसे प्रान्तीय फोरम भी कहा जाता है। इसकी स्थापना राज्य सरकार ही करती है, किन्तु इसके लिए उसे केन्द्र सरकार से अनुमोदन प्राप्त करना होता है।

1 गठन (Formation) आयोग मे अध्यक्ष और दो सदस्य, कुल तीन व्यक्ति होते है। तीनो की ही नियुक्ति राज्य सरकार द्वारा की जाती है।

अध्यक्ष - उच्च न्यायालय के न्यायाधीश या इस पद से सेवानिवृत न्यायाधीश,

सदस्य - अर्थशास्त्र, वाणिज्य, लेखाकर्म या उद्योग जगत से जुड़े दो योग्य, अनुभवी, ईमानदार व प्रतिष्ठित व्यक्ति, जिनमे से एक महिला होनी चाहिए। ये तीनो व्यक्ति मिलकर राज्य उपभोक्ता आयोग कहलाते है।

कार्यक्षेत्र (Jurisdiction) राज्य के उपभोक्ता के उन मामलो का निपटारा राज्य उपभोक्ता आयोग करता है, जहा

1 वस्तु या सेवा का मूल्य या क्षतिपूर्ति एक लाख रुपये से अधिक हो किन्तु दस लाख रुपये से अधिक न हो, तथा
2 राज्य मे स्थित जिला उपभोक्ता फोरम के निर्णयो के खिलाफ की गई अपील।

इस प्रकार, राज्य उपभोक्ता आयोग मौलिक शिकायतों एव अपील दोनों से सम्बधित कार्य करता है।

न्यायिक प्रक्रिया उपभोक्ता मामलो के निपटारे के लिए राज्य उपभोक्ता आयोग वही कार्यविधि अपनायेगा जो जिला उपभोक्ता फोरम अपनाता है तथा उक्त शीर्षक के अन्तर्गत वर्णित है।

राज्य उपभोक्ता आयोग के निर्णयो के विरुद्ध राष्ट्रीय उपभोक्ता आयोग में अपील की जा सकती है।

राष्ट्रीय उपभोक्ता आयोग (National Consumer Commission):

उपभोक्ता सरक्षण अधिनियम के अन्तर्गत त्रि-स्तरीय न्याय व्यवस्था मे उपभोक्ता विवाद को निपटाने के लिए यह सर्वोच्च सस्था है।

गठन (Formation) आयोग मे अध्यक्ष और चार सदस्य होते है जिनकी नियुक्ति केन्द्र सरकार करती है। सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश या इसी पद से अवकाश प्राप्त न्यायाधीश मुख्य न्यायाधीश की सलाह पर आयोग के अध्यक्ष होते है। वाणिज्य, अर्थशास्त्र, विधि, कानून, लेखाकर्म, उद्योग, प्रशासन, आदि क्षेत्रो से पर्याप्त अनुभव रखने वाले, ईमानदार, अनुभवी, ज्ञानवान एव प्रतिष्ठित कोई चार व्यक्ति आयोग के सदस्य बनाये जाते है। सरकार चयन के लिए एक समिति बनाती है जिसकी सलाह पर आयोग का गठन किया जाता है।

स्थापना या गठन (Formation)

इस 150 सदस्यीय समिति का गठन केन्द्र स्तर पर होता है। केन्द्र सरकार के खाद्य एव आपूर्ति विभाग के प्रभारी मन्त्री इसके अध्यक्ष तथा विभाग के राज्यमत्री एव उपमन्त्री उपाध्यक्ष होते है। कोई आठ ससद सदस्य, आयुक्त अनुसूचित जाति एव जनजाति, उपभोक्ता हितो से जुडे केन्द्र सरकार के विभागो के 20 प्रतिनिधि, उपभोक्ता सघो या उपभोक्ताओ के 35 प्रतिनिधि, 10 महिला प्रतिनिधि, 20 उत्पादको (किसानो, व्यापारियो व उद्योगपतियो) के प्रतिनिधि तथा 15 अन्य व्यक्ति जो उपभोक्ताओ का प्रतिनिधित्व कर सके इसके सदस्य होगे। आपूर्ति विभाग के सचिव इसके मनोनीत सदस्य होगे। परिषद का कार्यकाल तीन वर्ष का होता है। परिषद जब चाहे अपनी बैठके आयोजित कर सकती है किन्तु वर्ष मे कम से कम तीन बैठकें अवश्य होनी चाहिए। परिषद अपने सदस्यो मे से आवश्यकतानुसार किसी भी कार्यकारी दल (Working Group) का गठन कर सकती है, जो विशेष समस्याओ पर अपना प्रतिवेदन प्रस्तुत करेगा जिसे परिषद के विचारार्थ प्रस्तुत किया जावेगा। परिषद अपने प्रस्ताव सलाह के रूप मे प्रस्तुत करती है।

ब. राज्य उपभोक्ता सरक्षण परिषद-

केन्द्रीय उपभोक्ता सरक्षण परिषद के आधार पर ही राज्यो मे भी उपभोक्ता सरक्षण परिषदो का गठन किया गया है। केन्द्र और राज्य दोनों स्तरो पर परिषद के उद्देश्यो मे समानता पाई जाती है। किन्तु राज्य सरकार के आवश्यकतानुसार विभिन्न राज्यो की परिषद मे अलग-अलग सदस्य सख्या होती है। राज्य सरकार का उपभोक्ता सम्बन्धी मामलो का प्रभारी मन्त्री राज्य उपभोक्ता सरक्षण परिषद का अध्यक्ष होता है। इस परिषद की बैठक वर्ष मे कम से कम बार अवश्य होती है। यह परिषद राज्य के भीतर उपभोक्ता हितो का सरक्षण व सवर्द्धन करती है।

उपभोक्ता मामलों का निपटारा (Redressal of Consumer's Disputes)-

राज्य सरकारो से आशा की जाती है कि उपभोक्ता सरक्षण के लिए राज्य मे उपभोक्ता सरक्षण परिषद के अतिरिक्त निम्न सगठनों को भी गठित करे ·

1 जिला स्तर पर उपभोक्ताओ के मामलो के निपटारे के लिए जिला उपभोक्ता मच या जिला उपभोक्ता फोरम (District Consumer Forum)।

2 राज्य स्तर पर उपभोक्ताओ के मामलो के निपटारे के लिए राज्य या प्रान्तीय आयोग (State Commission)।

इसी प्रकार, केन्द्रीय स्तर पर उपभोक्ताओ के मामलो के निपटारे के लिए राष्ट्रीय उपभोक्ता आयोग की स्थापना केन्द्र सरकार द्वारा की जाती है।

जिला उपभोक्ता मंच या जिला उपभोक्ता फोरम (District Consumer Forum).

उपभोक्ता सरक्षण अधिनियम के अनुसार प्रत्येक जिले मे उपभोक्ताओ के मामलो के निपटारे के लिए एक उपभोक्ता फोरम का प्रावधान है। इसके बारे मे विवरण निम्न प्रकार है

1 गठन (Formation) जिला स्तर पर उपभोक्ता फोरम मे तीन सदस्य होगे-

अ जिला न्यायालय के कार्यरत या सेवानिवृत जज-राज्य सरकार द्वारा मनोनीत — अध्यक्ष
ब शिक्षा, व्यवसाय या वाणिज्य के क्षेत्र से एक ख्याति प्राप्त व्यक्ति — सदस्य
स एक महिला सामाजिक कार्यकर्ता — सदस्य

प्रत्येक सदस्य का कार्यकाल 5 वर्ष या 65 वर्ष की आयु तक (जो भी पहले हो) तक होगा एव वह पुन नियुक्ति का पात्र नही होगा। इस फोरम की कार्य सीमा या अधिकार क्षेत्र एक लाख रुपये मूल्य तक की वस्तुओ और सेवाओ के वाद या क्षतिपूर्ति सम्बधित दावा है।

2 शिकायत दर्ज करने की प्रक्रिया निम्न व्यक्ति या सगठन जिला फोरम मे उनके कार्यक्षेत्र से सम्बधित शिकायते दर्ज करा सकते है

(अ) स्वय उपभोक्ता
(ब) कोई मान्यता प्राप्त उपभोक्ता सगठन
(क) केन्द्र या राज्य सरकार।

कार्यक्षेत्र (Jurisdiction) आयोग निम्न सीमाओ मे कार्य करता है -

1 शिकायते व विवाद जहा वस्तु या सेवा की कीमत या निहित क्षतिपूर्ति की राशि दस लाख रुपये से अधिक हो।

2 राज्यो के उपभोक्ता आयोग के निर्णय के खिलाफ की गई अपील।

न्यायिक प्रक्रिया : राष्ट्रीय आयोग मे भी उपभोक्ताओ से सम्बन्धित मामले निपटाने के लिए वही प्रक्रिया अपनाई जाती है जो कि जिला फोरम अपनाती है, इसके साथ ही केन्द्र सरकार की कार्यविधियो को भी ध्यान मे रखा जाता है।

उपभोक्ता सरक्षण के निर्णयो का कार्यान्वयन (Enforcement):

जिला फोरम, राज्य आयोग या राष्ट्रीय आयोग का कोई भी आदेश अधिनियम की धाराओ के अन्तर्गत अंतिम होता है और उसे लागू किया जाता है जब तक कि उसके खिलाफ कोई अपील न की गई हो। इस आदेश को भी उसी प्रकार लागू किया जाता है जिस प्रकार किसी न्यायालय के विवाद मे हुए फैसले के अन्तर्गत कोई आदेश या जुर्माना लागू होता है। यदि एक व्यवसायी या व्यक्ति जिला फोरम, राज्य आयोग या राष्ट्रीय आयोग के फैसले को मानने से इन्कार करता है या उसमे कोई कोताही करता है तो उसे तीन वर्ष तक का कारावास और/या दस हजार रुपये तक का जुर्माना किया जा सकता है।

उपभोक्ता सरक्षण अधिनियम, 1986 मे किये गये सशोधन (Amendments)

भारत सरकार ने एक अध्यादेश पारित करके जून, 1993 मे उपभोक्ता सरक्षण अधिनियम मे निम्न सशोधन किये -

1 चिकित्सा को भी एक सेवा माना गया। इसलिए गलत रीतियो का प्रयोग करके धन कमाने वाले चिकित्सको पर भी यह अधिनियम लागू होगा।

2 मकान एव उससे सम्बंधित (Housing and related services) उपभोक्ता की समस्याओ को भी इस अधिनियम की परिधि मे लाया गया।

3 ऐसे व्यवसायी जो कि प्रतिबंधित व्यापार प्रणलियो (Restricted Trade Practices) का प्रयोग करते है या क्षतिग्रस्त बस्तु को बदलने से मना करते है, उनके लिए अधिनियम के प्रावधानो को और कडा किया गया।

4 अधिनियम के अन्तर्गत समूह कार्यवाही (Class Action) को लागू किया गया। यदि उपभोक्ताओ के एक समूह के लिए वाद प्रस्तुत किया गया है तो उत्पादक को समूह के प्रत्येक व्यक्ति की वस्तु को बदलना पडेगा।

इस प्रकार आजकल ऐसे अर्द्ध-न्यायिक सगठन व प्रक्रियाए है जो उपभोक्ता की शिकायतो को दर्ज कर सकते है, उनकी सुनवाई कर सकते है तथा उचित निर्णय दे सकते है। किन्तु, अधिकाश शिकायते कम धनराशि की होती है जिससे अधिनियम का पालन करना और उसे लागू करना पूरी तरह से जिला फोरम पर ही निर्भर करता है। इसलिए, फोरम का सशक्त होना अतिआवश्यक है। उपभोक्ता सरक्षण अधिनियम, विधान, राज्य एव केन्द्रीय स्तर पर आयोग, जिला फोरम तथा उनके द्वारा उठाये गये कदम अवश्य ही उपभोक्ता संरक्षण मे महत्वपूर्ण योगदान देते है।

REGIONAL INSTITUTE OF EDUCATION (NCERT)
Shyamla Hills, BHOPAL.

PAC Prog. 16.26:

" Training of KRPs in Content-cum-Methodology of Social Sciences at Secondary Level".

(From 13th November to 17th November, 2000)

TIME -SCHEDULE

Days/Session	I-Session (9 30 to 11 00)	II-Session (11 15-12 45)	III-Session (2 15-3 45)	IV-Sesseion (4 00-5 30)
13 11.2000 Monday	Inaugural Function	About the Programme -Prog Coordinator	International Trade	Environment and Human Life
14 11 2000 Tuesday	What is History? Scope and Importance	History Curriculum at Secondary Level -A Discussion	Methods of Teaching Social Sciences (History)	Energy Resources and its Conservation
15.11 2000 Wednesday	Establishment and Expansion of British Rule in India	Emerging Trends in Indian Political System	Methods of Teaching Social Sciences (Economics)	Environment and Pollution
16 11.2000 Thursday	History of the Modern World	Constitutional Review	Economic Planning in India	Land Use and Water Resources
17 11 2000 Friday	U N – From Peace Maker to Peace Keeper	Revolutionary Movements	Valedictory Function	Disbursement of TA/DA

Note i) Tea Break between 11 00 to 11 15 a.m and 3 45 to 4.00 p m.

ii)Lunch Break between 12.45 p m to 2 15 p.m

List of Resource Persons and Participants

1. Prof B K. Shrivastava
   Professor of History
   Govt. Hamidia P G College,
   Bhopal

2. Prof K.K. Tiwari
   Professor of Political Science
   Govt. Hamidia P.G. College,
   Bhopal.

3. Dr (Mrs) Rita Naronha
   Asstt. Professor of History
   Sarojini Naidu Govt Girls P G College
   (Nutan College) Bhopal

4. Dr (Mrs.) Jayshree Mishra,
   Asstt. Professor of Political Science,
   Sarojini Naidu Govt Girls P.G College
   (Nutan College) Bhopal

5. Dr (Mrs) Asha Mishra
   Professor of History
   M L B Govt Girls P.G. College,
   Bhopal

6. Ms Mangla Ekbote,
   Director, Training Centre,
   Board of Secondary Education,
   Bhopal

7. Dr J P Singh
   Reader in Geography
   RIE, Bhopal

8. Dr Sharad Kumar
   Reader in Commerce
   RIE, Bhopal

9. Dr K R Sharma

Reader in Education,
RIE, Bhopal

10. Dr I B. Chughtai,
Sr. Lecturer in Education,
RIE, Bhopal

11 Dr Ramakar Raizada,
Sr Lecturer in Commerce,
RIE, Bhopal.

12 Mr Dinesh O Majithiya,
Shri Madhavlal Shah High School,
Khambat
Dist Anand (Gujarat)

13 Mr I.B Patel,
Sarkari Madhyamik Shala, Linga,
Tal & Distt - Ahva (Dang)
Gujarat

14 Mr Bhaskar N Patel,
Shri K A Thakur High School,
Nandol,
Distt Gandhinagar (Gujarat)

15 Mr Pandya Dhirendra Kumar
Shri M M High School
Nikoda
Tal - Himmatnagar,
Distt – Sabarkantha (Gujarat)

16 Dr M. Siraj Anwar,
Programme Coordinator,
RIE, Bhopal